पुनर्जीवन

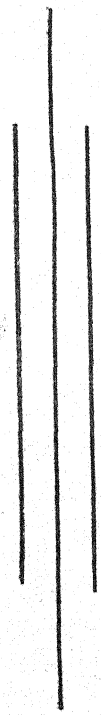

८१३.३
वंश।पु

वंशनारायण सिंह

पुनर्जीवन

डा० धीरेन्द्र वर्मा पुस्तक-संग्रह

लेखक

वंशनारायण सिंह

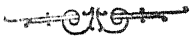

संवत् २०१५] १९५८ ई० [मूल्य ३)

प्रकाशक
वंशनारायन सिंह
रामनगर, बनारस राज्य

मूल्य ३)
प्रथम संस्करण, १९५८

मुद्रक
सन्मार्ग प्रेस, वाराणसी

—: समर्पण :—

स्वर्गीय पूज्यपाद श्री गुरुदेव की पावन स्मृति में :—

वंशनारायन सिंह

"पुनर्जीवन" में एक समस्या हैं जो घटनाओं के आवर्तन में स्वयं बनी और बिगड़ी है तथा परिस्थिति की विषमता को लेकर स्वतः समाधान बन कर बिखर उठी है। कुछ लोग इसे आध्यात्म कहेंगे पर मैं इसे कहूँगा आध्यात्म और भौतिकता का समन्वय, जिसकी आज नितान्त आवश्यकता है।

वंशनारायण सिंह

प्रथम

बच्चे खा-पीकर सो गये थे पर उमा अब भी बरामदे में बैठी निर्मल की प्रतीक्षा कर रही थी। धीरे-धीरे घड़ी ने बारह बजाया, पर निर्मल का अब भी पता नहीं था। उसने उठकर बरामदे से बाहर झाँका, देखा तो वह चारपाई पर सिर नीचा किये बैठा था, कदाचित् किसी मानसिक पीड़ा से उद्विग्न और व्याकुल। कभी एक आह खींचकर सो जाता तो कभी उठकर विकलता वश टहलने लगता। उमा उसकी इस विकलता को देख सन्न रह गई। जब से वह मायके से आयी थी, उसे ऐसी अवस्था में कभी भी नहीं देखी थी। उस दिन भी जब वह देर से आया तो हँसमुख ही बना रहा और काम की अधिकता ही कारण बताकर चाय पीने लगा। चाय की चुसकी लेते हुए कहा भी था कि वह आज के प्रायः सभी विचाराधीन काम समाप्त कर आया है और हो सका तो अगले दिन बहुत पहले ही आ जायगा। इसलिए कि उस दिन गुरुदेव जी जो आनेवाले हैं जिनके दर्शनार्थ चलना आवश्यक है। तुम भी तैयार रहना। बच्चों को तो ले चलना ठीक न होगा? रमाकान्त सबको यहीं देख लेगा और उमा की स्वीकारोक्ति पाकर गद्‌गद् हो उठा था।

पर···आज···ऐसी अवस्था 'उफ' वह कुछ समझ ही न सकी। घबड़ाकर निर्मल के पास आकर खड़ी हो गयी पर उसे उसके आने की कुछ भी आहट न लगी। कुछ देर तक वह यों ही खड़ी रही पर जब उमा ने यह कहते हुए शान्ति भंग की कि कहिए स्वास्थ्य तो ठीक है न? सुन

कर वह जैसे अचकचा सा गया। अपनी इस उद्विग्नता को छिपाने का प्रयास करके भी वह न छिपा सका और उठकर उसके साथ चलना चाहा पर पैर ने जवाब दे दिया और धम से वहीं उसी चारपाई पर बैठ गया। उमा कुछ समझ ही न पा रही थी कि आखिर इसका कारण क्या है? घबड़ाकर उसने जोर देते हुये इसका फिर कारण पूछा? उसके इस तरह बार-बार दबाव देते रहने पर निर्मल ने केवल इतना ही कहा कि—"उसकी विभागीय परीक्षा होने वाली है।"

"इतनी नौकरी के बाद?"

हाँ! और उसके साथ एक यह भी शर्त है कि यदि परीक्षा में अनुत्तीर्ण हुआ तो नौकरी से अलग कर दिया जाऊँगा?

"नौकरी से अलग! अभी तो उस दिन "लीडर" में प्रधान मंत्री का वक्तव्य निकला था कि तीन वर्ष से अधिक की नौकरी वाले स्थाई कर दिये जायँगे।" फिर आपकी तो पाँच साल की हो चुकी थी।"

"पाँच साल होने से क्या होता है। इन अफसरों के लिए ३० साल की नौकरी भी कुछ मूल्य नहीं रखती। जब जी चाहा, कान पकड़ कर बाहर कर दिया। फिर हम छोटी नौकरी वालों की सुनने वाला ही कौन ठहरा। पता नहीं ये अधिकारी गण चाहते क्या हैं? दिन रात काम करने बाद भी ये तने ही रहते हैं। तुम तो देख ही रही हो कि कोई भी ऐसा दिन नहीं जाता जब कि ११ बजे से पहले घर आता! फिर भी यदि कहीं कुछ गलती हो पड़ी तो उल्टी सीधी बीसों सुना गया "ठीक ठीक से काम करो नहीं तो निकाल दूंगा, निलम्बित कर दूँगा! दुष्ट, मूर्ख, और झट फाइल के साथ सारा कागज़ लेकर फेंक देता है। क्या करता अपना सा मुँह लेकर फाइल समेट कर कुर्सी पर ठीक से बैठ भी नहीं पाता कि फिर बुला भेजता है "कल दौड़े पर चलना है सुबह छः बजे आ जाना होगा। उस दिन जब दौड़े में साथ गया था तो काम करते करते दो बज गया। भोजन के लिए छुट्टी माँगा तो त्योरी बदलते हुए

कहा कि "क्या रोटी खाना अनिवार्य है। अन्य देशों के लोग तो रोटी नहीं खाते"। जिस पर मैंने बस इतना भर कहा था" हमारा देश जो गरीब ठहरा साहब'''सुनते ही बिगड़ कर कैम्प आफिस से बाहर हो जाने के लिए आदेश दे दिया और तब से लगातार पीछे पड़ा है। जरा भी गलती हुई कि उल्टी सीधी जो जी में आया कह सुनाया। क्या करें बेकारी की ऐसी विकट समस्या जो ठहरी नहीं तो आज ही स्तीफा देकर चला आता। कुत्तों सा जीवन बिताना पड़ता है प्रिये! कुत्तों सा! कहते कहते निर्मल गम्भीर हो गया और आँखों से विवशता के दो बूँद आँसू बरबस ही उसके शुष्क और पिचके हुए गालों पर ढुलक पड़े।

—:o:—

द्वितीय

निलम्बन!

"हाँ! वह भी इसलिए कि उस दिन जो कैम्प में थोड़ा सा उत्तर दे दिया था।"

"बस इतनी ही बात पर! उफ भगवन् क्या अस्थायी नौकरों को बोलने का भी अधिकार नहीं? उफ! तो फिर आगे क्या होगा?"

"क्या बताऊँ सोचता हूँ घर पर ही चल चलूँ, पर वहाँ भी अपना कौन ठहरा! माता पिता मर ही चुके हैं, चचेरे भाई ठहरे! वह भी इतने दिन आये हो गया, एक छदाम भी तो उन लोगों के पास नहीं भेजा, और भेजता ही कहाँ से। कभी एक पैसा बचता भी है?"

"तो आपका हक हिस्सा कहाँ जाता है ? वहीं रहकर खेती गिरस्ती करियेगा।"

"खेत बारी कौन देता है ? सब हथिआये बैठे हैं। पिछले साल जब थोड़ा सा गल्ला लेने घर गया था तो सबके सब बिगड़ कर खड़े हो गये, कहने लगे "क्या अब कमाई में पत्थर मार गया जो यहाँ भी हिस्सा बटाने आये हो। इसके पहले कभी यह भी सोचा था कि खेती गिरस्ती में भी रुपये पैसे की आवश्यकता पड़ती है ! लगान, नातकारे ही कभी दो चार धेला टेका दिये होते ! हम लोग न होते तो सारा का सारा खेत बेदखल हो गया होता तब क्या लेने आते अपना सर। और जो बाप का हिस्सा बटाने आये हो तो जो जोतता बोता है उसकी भूमि ठहरी। जानते नहीं हो आये दिन हमारी सरकार इस प्रकार के कितने ही कानून बना रही है ? दिन भर मैं यों ही दरवाजे पर बैठा रहा पर किसी ने पानी तक के लिए न पूछा ? जब शाम होने लगी तो उठ कर "हरखू भईया" के द्वार पर चला गया। इसके अतिरिक्त झगड़ा झंझट करके यदि दो एक बीघा खेत पा भी जाऊँ तो अकेले क्या कर सकूँगा, उसके लिए एक मजदूर चाहिए। कम से कम दो बैल का रहना नितान्त आवश्यक है और इधर पास में एक छदाम भी नहीं ठहरा। आज महीने की बीसवीं तारीख हो तो है, तुम्ही बताओ है तुम्हारे पास एक पैसा ! कल जब सुरेन्द्र के मस्तक में छत से गिर जाने के कारण चोट लग गयी पास में एक पैसा भी नहीं था जो रिक्सा करके अस्पताल ले जाता। खैर झिल्लू भइया आ गये और बिना मुझसे पूछे रिक्सा करके झट अस्पताल चले गये नहीं तो उस दिन उसकी जान न बचती ? अभी मँहगू का उस महीने का भी कुछ हिसाब बाकी ही रह गया है। नित्य जान खाये जा रहा है। कहता है बाबू जी अभी उस महीने का तो हिसाब चुकता किये ही नहीं, इस महीने में भी उधार लेने लग गये ? हमारे घर रुपये पैसे का कोई डाल तो फलता नहीं, जो सबको हिला हिला कर देता फिरूँ ? इस बार तो ले जाइए, लौटाता नहीं पर जरा सोचना भी चाहिए। क्या करता सामान लेकर सर नीचा किये

चुपचाप चला आया। तुम्हारे पास भी कोई ऐसा आभूषण न ठहरा जिससे उसी के सहारे कुछ दिन झेल ले चलता।"

"आभूषण तो बाबू जी ने सम्पूर्ण बनवा दिया था, पर····· कहते कहते उमा रुक सी गयी।"

"हाँ! हाँ! उसमें सब मेरा ही कसूर था क्या करता, लाचार था, नौकरी के लिए कहाँ कहाँ की धूल नहीं फाँका, कलकत्ता, बम्बई और न जाने कहाँ कहाँ घूमता फिरा, तब कहीं जाकर यह नौकरी पाया, जिसकी यह गति। सोचा था नौकरी मिल जायगी तो तुम्हारे लिए मैं फिर से सारे गहने नये सिरे का बनवा दूँगा पर·····कहते कहते निर्मल गम्भीर बन गया।"

"अब सोचना सोचाना रहने दीजिए। चलिए कहीं दूसरी जगह जहाँ कोई छोटी मोटी नौकरी मिल जाय" कह कर अपने अर्थ पूर्ण दृष्टि से निर्मल की ओर देखा "नहीं! नहीं! अभी निलम्बन काल में यहीं रहना पड़ेगा। यदि कहीं जाऊँ भी तो नियमानुकूल छुट्टी लेकर। फिर छुट्टी देने के लिए साहब तैयार ही क्यों होगा? इसलिए कि निलम्बन काल में छुट्टी नहीं मिलती। अभी परीक्षा भी तो देनी है कदाचित भाग्य कुछ अनुकूल होजाये।" कहते कहते निर्मल के चेहरे पर एक बार पुनः आशा दौड़ गई और उमा भी आशान्वित होकर चाय बनाने चली गयी।

तृतीय

निर्मल को जो शंका थी वह ही हुआ। परीक्षा फल निकला जिसमें उसे केवल ३३% ही नम्बर प्राप्त हुए जब कि उत्तीर्ण नम्बर ५०% तक निर्धारित था। फलतः एक महीने की नोटिस उसे दे दी गयी। नोटिस मिलते ही निर्मल को काटो तो खून नहीं। सोचा साहब बहादुर से ही कुछ बिनती करूँ? और उठकर पड़े हुए चिक को उठा कर "मैं आ सकता हूँ महाशय" कहते हुए भीतर जाना चाहा, पर साहब बहादुर ने गम्भीर मुद्रा में केवल इतना ही कहा "ठहरो!" सुनते ही वह वहीं रुक गया! खड़े खड़े उसे घंटों बीत गया पर साहब ने अब तक उसे बुलाया ही नहीं "मैं" आ सकता हूँ" महोदय कहकर निर्मल पुनः चिक उठाकर भीतर जाना चाहा। इस बार साहब ने झल्लाते हुए कहा "क्या है? क्या चाहते हो?" कौन! चपरासी! बड़े बाबू को तो बुलाओ? और हाँ "बड़े बाबू इसका हिसाब लेखापाल से कह कर बनवा दीजिए। मैं ऐसे लोगों का मुँह तक देखना नहीं चाहता। उस दिन कैम्प में किस प्रकार अकड़कर बातें कर रहा था? अब समझा कि मैं कौन हूँ? गाड, गाड (ईश्वर, ईश्वर) अजी तुम्हारा ईश्वर! समझे न! जाओ अपना हिसाब ले लो।

"हुजूर अभी एक महीने बाद" बड़े बाबू ने काँपते हुए स्वर में कहा।

"मैं कुछ नहीं सुनना चाहता! आप इनका हिसाब चुकती करा दीजिए। जो होगा मैं समझ लूँगा, समझे न! और उठकर भीतर चले गये। चपरासी ने आफिस बन्द कर दिया।

ससपेन्सन एलाउन्स (निलम्बन-भत्ता) घर लेकर निर्मल पहुँचा भी न था कि मुहल्ले भर में पता हो गया कि निर्मल बाबू को साहब ने निकाल दिया है। मकान मालिक नौकर से किराया चुकती करा लेने को कहकर कोठी के भीतर चले गये। दूधवाली हिसाब करके दरवाजे पर आ बैठी। मँहगू साहु भी अपना कच्चा चिट्ठा बना कर आ धमके। पहले निर्मल को देख सबने उसके साथ प्रचुर समवेदना प्रकट की। किसी ने साहब की भर्त्सना की, किसी ने निर्मल के शील-स्वभाव की प्रशंसा की। पर बाद में एक एक कर सबने अपना-अपना कच्चा चिट्ठा पेश ही कर दिया। निर्मल हैरान था कि इन लोगों को उसके घर पहुँचने के पहले ही कैसे पता लग गया। पर करता ही क्या! लाचार था। जो कुछ भी पास में रहा दे दिलाकर पिण्ड छुड़ाया। अब पास में एक छदाम भी न बचा। खाने-पीने का भी तो प्रबन्ध करना ही था। आगे उधार मिलने की भी कुछ आशा न थी। हार कर कुछ काम-चलाऊँ बरतनों को छोड़ और सबको बेच डाला। घर पर कुछ दिन के लिए आवश्यक खाद्यपदार्थों को रखकर नौकरी के लिए बाहर निकल पड़ा। दिन भर शहर के इर्द-गिर्द कितने ही कार्यालयों का चक्कर काटता रहा। पर पद रिक्त नहीं है का शब्द ही केवल उसे मिला। शाम को मुँह लटकाए जब घर पहुँचा तो दिन भर की तमाम विपत्तियों को उमा से कह सुनाया। सुनते ही उमा ने कहा कि क्या यह आवश्यक है कि जो काम आप उस कार्यालय में करते थे वही करें? कोई भी छोटा-मोटा काम जो मिले कर लीजिए। बैठने का ठिकाना तो हो जाय? फिर बाद में और भी ढूँढ़ते रहिएगा।

"अरे भाई क्या करूँ कोई छोटा-मोटा मिले भी तो? खलासी, चपरासी, चौकीदार किसके-किसके लिए नहीं कहा, पर कोई सुने तब तो? अधिकारियों की हालत तो थोड़ी-बहुत जानती ही हो। पहले तो वे सीधे मुँह बात नहीं करते। यदि किसी ने कुछ पूछा भी तो बस इतना ही भर "तुम्हारी क्या योग्यता है" अपनी योग्यता बताकर जब

अपने मतलब की एकाध बात छेड़ा तो कह दिया "बड़े बाबू से मिलिए।" बड़े बाबू से निवेदन किया तो उन्होंने "रोजगार दफ्तर में नाम लिखाने की राय बता दी। रोजगार दफ्तर की हालत आये-दिन किसी से छिपी नहीं थी कि वे कितने अधिकार सम्पन्न हैं। (समागम) भर करा देना तथा उसके लिए नाम भेज देना ही उनके अधिकार में है। योग्य अथवा अयोग्य बनाना तो इन्हीं साहबों के हाथ ठहरा। इन साहबों की हालत यह है कि कदाचित देवता भी इनके सामने समागम में आयें तो उन्हें भी अनुत्तीर्ण करने से बाज न आयेंगे। सुनते ही उमा बड़बड़ा उठी। उफ! भगवन् क्या ये अफसरान अपने को अब भी भारतीय सन्तान नहीं समझते जो स्वतन्त्रतापूर्वक अत्याचार की ओर उन्मुख ही बने हुए हैं। क्या ये अब भी अपने को जनता का सेवक नहीं समझ रहे हैं? पुराने अधिकारियों की बात तो जाने दीजिए उनके लिए यह कुछ दिन तक सम्भव भी हो सकता है, इसलिए कि वे विदेशों से जो उच्च डिग्री प्राप्त कर आये हैं। पर ये नये अफसरान जिन्हें अपने ही देश में उच्च शिक्षा प्राप्त हुई है, जिन्हें प्रारम्भ से ही जनता का विश्वासपात्र सेवक बनने की शिक्षा दी गई है पता नहीं क्यों उनमें इस प्रकार अंगरेजी सल्तनत की बू आ रही है। क्यों इस प्रकार सातवें आसमान पर उनका दिमाग चढ़ा हुआ है?" कह कर उमा के आक्रोषमय आवेग से अपने होठों को काटने लगे। "इन अफसरानों का कोई दोष नहीं प्रिये! सब अपने कर्मों का ही फल है। पूर्व जन्म के किये हुए कर्तव्यों का फल भी तो भुगतना ही पड़ता है। पूर्व जन्म के किये हुए अच्छे या बुरे कर्त्तव्य ही हमारे संस्कार बनते हैं। कभी-कभी यह देखा भी जाता है कि बड़े-बड़े तपस्वी भी महान कष्टों और विपत्तियों में फँसते और उसी से डूबते-उतराते हैं। पर वे इसकी चिन्ता न कर हँसते हुए सब कुछ झेलने को तैयार रहते हैं क्यों? इसलिए कि वे जानते हैं कि पूर्व जन्म में जो कुछ भी कर्तव्याकर्तव्य उनके द्वारा किया गया है, उसका क्षय केवल भोग से ही हो सकता है। बिना भोगे

वह कटता ही नहीं। चाहे उसे हँसकर भोगो या रोकर। वर्तमान का निर्माण तो भविष्य के लिए होता है। इसलिए वर्तमान भूत का भोग और भविष्य की आधार-शिला है।" कह कर निर्मल चुप हो गया।

"क्या पूर्वजन्म का भोग हम गरीबों के लिए ही बना हुआ है" प्रश्नवाचक शब्दों में उमा ने कहा।

"नहीं-नहीं! ऐसी बात नहीं। हम गरीबों में भी बहुतेरे ऐसे-ऐसे उच्च अफसर हुए हैं जिनकी मेहनत और बुद्धिप्रखरता की कहानियाँ आजतक पढ़ी और सुनी जाती हैं। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि स्वतन्त्रता के संग्राम में इन्हीं गरीब घरों की संताने जो उच्च-उच्च पदों पर आसीन थी, सबसे अधिक त्याग दिखलाया था और बापू के कन्धे से अपना कन्धा भिड़ा कर देश को स्वतन्त्र कराया। जिनके स्मारक आज दिन देश के कोने-कोने में बनाये जा रहे हैं कहते हुए निर्मल उत्सुकता भरी दृष्टि से उमा की ओर देखने लगा।"

"बात तो आप ठीक कह रहे हैं पर आज दिन तो शत-प्रतिशत बड़े घरों के लड़के ही उच्च-उच्च पदों के लिए मनोनीत किये जा रहे हैं।"

"नहीं नहीं, ऐसी बात तो नहीं है। पिछड़ी हुई और निम्नवर्गीय सन्तानों को विशेष सुविधा दी जा रही है इसलिए कि इन्हीं लोगों में गरीबो का आधिक्य है।" निर्मल ने कहा—"कौन कहता है कि केवल पिछड़ी हुई जातियाँ ही गरीब हैं, क्या उच्च वर्णों में सभी लोग धनी ही हैं। मैं तो इस तथ्य को नहीं मानती। उच्च वर्णों में भी कुछ एक ईकाई को छोड़ प्रायः सभी गरीब हैं। फिर पिछड़ी हुई जातियों को विशेष सुविधा देना कहाँ तक उचित है। इस धर्म निरपेक्ष सरकार को जातीय विष बोना उचित नहीं। ऊँच-नीच सभी एक-सी प्रजा हैं। सभी को समान सुविधा दी जाय। जो सबसे अधिक सुयोग्य हों उन्हें मनोनीत किया जाय। रही स्कूलों की बात, उसमें किसी को वजीफा देना, उससे फीस तक न लेना और दूसरे के साथ इसके प्रतिकूल आचरण करना

कहाँ तक संगत है। यदि सरकार को यही करना है तो स्कूलों में लगने वाली फीस ही माफ कर दे। फिर जो प्रखर बुद्धि का निकले उसके लिए वजीफा का प्रबन्ध भले ही कर दे, कह कर उमा चुप हो गई। "हमारी राष्ट्रीय सरकार जो अभी इतनी धनी नहीं है, फिर विज्ञान और अन्य टेकनिकल शिक्षा को दिलाने में धन की अधिक आवश्यकता पड़ती है। उपयोगी वस्तुओं और मशीनों को वाह्य देशों से मँगानी पड़ती है जिसके लिए सरकार को काफी धन व्यय करना पड़ता है। इस धन की पूर्ति कुछ तो सरकार धनी लड़कों पर फीस लगाकर करती है और कुछ स्वयं अपनी ओर से मदद के रूप में देती है।" निर्मल ने कहा—"तो इसका मतलब यह हुआ कि केवल धनी लड़के ही विज्ञान तथा अन्य प्रोद्यो-गिक शिक्षा प्राप्त करे, और गरीब घरों के लड़के हाई स्कूल तथा इन्टर तक शिक्षा प्राप्त करके क्लर्की में आयें। और आये दिन क्लर्कोंपर जैसी बीत रही है वह किसी से छिपी नहीं। मैं तो यहाँ तक कहने के लिए तैय्यार हूँ कि फावड़े का काम भी इस क्लर्की से कई गुना अच्छा है। यह सब अंगरेजों के मस्तिष्क की उपज थी जिन्होंने काम चलाने के लिए क्लर्कों की श्रेणी का सूत्र पात किया था। अब तो हमारी राष्ट्रीय सरकार के लिए यह उचित है कि प्रत्येक लोगों को टेकनिकल शिक्षा, वह भी मुफ्त दिलाने का प्रयास करे। फिर शिक्षा प्राप्त करने के बाद जिसकी जैसी इच्छा हो, इच्छानुसार अपने-अपने लिए कार्य क्षेत्र चुन ले।"

उमा ने कहा—इसका मतलब यह होगा कि क्लर्क फिर मिलेंगे ही नहीं। टेकनिकल शिक्षा प्राप्त करके कौन सा मूर्ख ऐसा होगा जो क्लर्की करेगा। निर्मल के कहा :—

"नहीं ऐसी बात तो नहीं। यदि यही है तो हमारा देश कृषि प्रधानदेश है, इसमें केवल कृषि की उन्नति के अतिरिक्त फिर दूसरा कोई कार्य करना ही नहीं होना चाहिये। आये दिन जो कल-कारखाने खुल रहे हैं उनको बन्द करा देना चाहिये, इसलिए कि उसके खुल जाने से हमारी कृषि को

धक्का लगेगा, कहकर उमा खिलखिला कर हँस पड़ी।" निर्मल उसके इस अकाट्य तर्क को सुनकर दंग रह गया। फिर मुसकुरा कर प्रसंग को बदलते हुए कहा—इस समय मेरे लिए तर्क करना और कराना उतना अच्छा नहीं जँचता, जितना नौकरी का पाना। मेरा तो स्वयं का अनुभव है कि अब इस शहर में नौकरी का मिलना दुर्लभ ही नहीं असंभव-सा है। अतः मैं सोचता हूँ कि कहीं दूसरे शहर को चला जाऊँ, कदाचित् वहाँ छोटी-मोटी एकाध नौकरी मिल जाय? तब तक अच्छा होगा कि तुम लोग यहीं पड़ी रहो।"

"नहीं नहीं, हम लोग भी साथ-साथ चलेंगे।"

"पर टिकट के लिए इतने रुपये कहाँ से आयेंगे?"

"बिना टिकट ही चलेंगे! यही न कि सरकार पकड़ कर जेल में बन्द कर देगी। भोजन तो समय पर मिलेगा न।"

"इसे तुम्हीं सोचो कि यह कहाँ तक उचित है?"

"उचित या अनुचित का क्या प्रश्न?"

"क्या आप की सर्विस का छूट जाना उचित है? यदि वह उचित है तो हम लोगों को साथ चलना भी उतना ही उचित है।"

"पर·····"

"पर·····वर कुछ नहीं। साथ चलूँगी ही सुनकर निर्मल गम्भीर हो गया और उमा चाय बनाने चली गयी।

—०—

चौथा

यहाँ आये निर्मल को करीब एक महीना हो गया। पर कहीं भी उसे नौकरी न मिली। पास में जो कुछ रहा वह भी खर्च हो गया। इन दिनों घर का खर्च कैसे चल रहा है, उसे कुछ पता ही न लगता। पर उमा को दिनोदिन क्षीण होते देख वह हृदय पकड़ कर रह जाता। कभी भी वह घर के राशन के प्रति कुछ पूछता तो उमा हँस कर टाल दिया करती और कहती "यह सब पूछने के पहले अच्छा हो यदि आप कहीं एकाध छोटी-मोटी नौकरी ढूँढ़ लें" सुनकर निर्मल चुप रह जाता।

माघ की कड़ाके की सर्दी। बच्चे सूरज डूबते ही खा-पीकर दुलाई के भीतर दुबक गये। निर्मल कार्य-विशेष से कहीं बाहर गया था इसलिए उमा चूल्हे के पास में बैठी हाथ सेंक रही थी और निर्मल की प्रतीक्षा भी। कुछ रात बीते जब निर्मल आया तो वह सीधे रसोई घर की ओर ही मुड़ पड़ा। देखा तो उमा चुपचाप बैठी हाथ सेंक रही है। निर्मल को देखते ही वह झट से खड़ी हो गई। "और कहा क्या थाली लगा दूँ या अभी ठहर कर भोजन करियेगा ?"

"थाली ही लगा दो "जा ड़े में कहीं प्यास और थकान भी आती है फिर ऐसी अवस्था में" सुनकर उमा ने थाली लगाकर निर्मल के आगे रख दिया। भोजन करने के बाद वह चुपके से उठकर बगल वाले कमरे में जाकर छिप गया जहाँ से वह उमा की प्रत्येक गतिविधियों को अच्छी तरह देख सकता था अन्धकार था हो, उमा ने भी इसकी ओर कुछ ध्यान नहीं

दिया और झट से जो रोटियाँ शेष बची थी उठाकर चौके से ढंक दिया फिर अपने एक गिलास जल घट घट पीकर उठ गयी। निर्मल यह सब कुछ उस घने अन्धकार को चीर कर देख रहा था। इस कारुणिक दृश्य को देखकर वह बेहोश-सा हो वहीं भूमि पर लुढ़क पड़ा। जब कुछ होश हुआ तो उठा और उमा के पास जाकर उसके इस प्रकार उपवास करते रहने के लिए उसकी भर्त्सना की। उमा क्या कहती, सुनकर चुप रह गयी। पर उसके आखों से दो बूँद आँसू ढुलक-ही पड़े जिसे वह छिपाने का प्रयास करके भी न छिपा सकी।

निर्मल सब कुछ देख सुनकर लाचार बना रहा। अपने को कुछ भी कर सकने में असमर्थ देख वह उठा और चुपके से जाकर अपनी चारपाई पर लेट गया। उस रात निर्मल को नींद आई भी, यह कौन जाने ?

—o—

पांचवाँ

सेठ गोविन्द दास शहर के एक रईस और धनीमानी व्यक्ति हैं। शहर में कई एक कपड़े और गल्ले की दूकानें हैं। बाह्य क्षेत्र में भी सरकारी ठेकेदारी का काम होता है, लक्ष्मी की उनपर अपार कृपा है पर एक कमी जो उन्हें हर समय खटका करती है वह यह कि वे अब तक निःसंतान हैं। इस कमी ने उन्हें बहुत कुछ धार्मिक प्रवृत्ति का बना दिया है, फल-स्वरूप उनकी आमदनी का $\frac{1}{5}$ भाग धर्म खाते में डाल दिया जाता था। इसके अतिरिक्त और जो कुछ साधु महात्माओं की सेवा में खर्च होता वह

उनके निजी खर्च में शामिल कर दिया जाता है। महीने में कम से कम दस दिन तो उनका बाहर ही बाहर देवी देवताओं के दर्शन में बीत जाता और शेष पूजा पाठ तथा भजन-कीर्तन में व्यतीत होता। पुत्र-प्राप्ति के लिए साधु संतों की सेवा में जहाँ कहीं भी किसी को सिद्ध महात्मा सुनते रुपये पैसे से हर समय उसके लिये उपस्थित रहते पर किसी से भी उनकी इच्छा पूर्ण होती दिखलाई न पड़ी। धीरे-धीरे सेठ की अवस्था भी अब ४५ से ऊपर की हो चली। एक दिन उनके मुनीम ने सूचना दी कि अमुक जगह किसी परम सन्त पुरुष का प्रवचन होने वाला है जहाँ के भक्तजनों ने बड़े धूमधाम से एक बृहद् भण्डारे का भी आयोजन कर रक्खा है। सुनते ही सेठ की इच्छा भी दर्शनार्थ जागृत हो उठी। उन्होंने उठकर सेठानी जी से सारा समाचार कह सुनाया और अगले दिन चलने की पूर्ण तैयारी भी कर ली।

प्रातः मैनेजर को बुलाकर सारा कार्य सौंप दिया "आठ या दस दिन में लौट सकूंगा। कोई परमसंत अमुक जगह आ रहे हैं, वहाँ के मुनीम ने ऐसी सूचना भेजी है। देखियेगा किसी काम में कोई गड़बड़ी न होने पावे" कह कर भीतर चले गये और मैनेजर अपने कार्यालय की ओर मुड़ गया।

उक्त शहर में सेठ की एक कोठी थी जहां उनका एक मुनीम तथा अन्य कई नौकर चाकर रहते थे। जो सरकारी ठीके का काम करते रहते थे। सार्वजनिक निर्माण विभाग, वन विभाग, आबकारी विभाग आदि कई विभागों में सेठ की अपनी खासी धूम थी। जनता में भी यथेष्ट रोब दाब था। महात्मा के स्वागत तथा प्रवचन का स्थान जनता द्वारा तथा स्वयं मुनीम द्वारा उसी कोठी में चुना गया था जिसकी सूचना सेठ जी को पूर्ववत् ही दे दी गयी थी। जिस ट्रेन से महात्मा जी आने वाले थे उसी ट्रेन से सेठ का भी आगमन था।

मुनीम ट्रेन आने के पूर्व ही टैक्सी लेकर स्टेशन पर डटा था। ट्रेन

अपने ठीक समय पर स्टेशन पर पहुँच गई। ट्रेन से उतरते ही मुनीम महात्मा जी तथा सेठ जी को टैक्सी में ले कोठी को रवाना हो गया।

कोठी पर पहुँच कर महात्मा जी ने सीधे प्रवचन हाल (कक्ष) में चलने की इच्छा व्यक्त की, इसलिए कि जनता की अपार भीड़ दर्शनार्थ प्रतीक्षा कर रही थी। पंडाल भीड़ से खचाखच भरा था महात्मा जी ने पहले कुछ संयम और साधन पर प्रवचन दिया। फिर मन की एकाग्रता पर विशेष जोर देते हुए आंतरिक सतसंग का कार्य प्रारम्भ कर दिया। पन्द्रह या बीस मिनट तक सब उसी एक आसन से बैठे हुए मन को एक स्थान पर ठहराने का प्रयास करने लगे। फिर जलसे का कार्य समाप्त करते हुए महात्मा जी ने कहा—"संसार के प्रत्येक व्यक्ति सुख चाहते हैं पर सुख एक काल्पनिक तृप्ति के और कुछ नहीं। यदि तृप्ति में असंतोष वर्तमान रहा तो वह वास्तविक तृप्ति नहीं और जब तृप्ति नहीं तो वास्तविक सुख नहीं। अतः तृप्ति और संतोष के समुचित समन्वय में ही कल्पना जनित सुख की परिभाषा कभी-कभी अभिव्यंजित होती रहती है और संसार में रहते, यह दोनों वस्तुएं एक साथ सम्भव नहीं। अतः दुखमय संसार से विरत रहना ही सुख है। संसार से विरत होने का मतलब माया से विरत होना। और माया छोड़ देने के बाद मानव स्वयं प्रभुमय हो जाता है इसलिए कि ईश्वर और मनुष्य में कोई भेद नहीं। भेद केवल सांसारिक है और यह संसार ममत्वमय है। माया और ब्रह्म के संयोग को ही ममत्व कहते हैं। माया के छोड़ देने पर केवल ब्रह्म रह जाता है कहकर महात्मा जी कुछ देर के लिए रुक गये और हाँ, ब्रह्म का गुण है सत्, चित् और आनन्द। तीनों ही ममत्व से परे हैं अतः इसे पाने में ही वास्तविक सुख है, कह कर महात्मा जी ने उस दिन का अपना प्रवचन समाप्त किया। सेठ जी पर महात्मा जी के व्यक्तित्व का ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनकी काया ही पलट गयी। उनकी जैसे सारी इच्छाएं ही पूर्ण हो गईं। जहाँ वे प्रत्येक महात्माओं से मिलते ही अपने निःसंतान बने रहने के दुःख को व्यक्त किये बिना न रहते वहाँ आज उनके मुख से एक शब्द

भी न निकला। वे प्रेम-विह्वल हो चरणों पर लोट पड़े और आँखों से बरबस ही प्रेमाश्रु टपकने लगा।

सत्संग का कार्य समाप्त हो जाने के बाद जब महात्मा जी ने महावीर जी के प्रसिद्ध मन्दिर को देखने की इच्छा व्यक्त की तो सेठ ने भी साथ में चलने की आज्ञा चाही। महावीर जी का मन्दिर एक पहाड़ी की ऊँची चोटी पर बना हुआ अत्यन्त प्राचीन मन्दिर था जिसके नीचे एक झरना अविकल गति से बहता रहता था जिसका स्वच्छ और शीतल जल उस पहाड़ी के लोगों का जीवन आधार था जिसके विषय में लोगों का कहना था कि इसके जल में ऐक ऐसा दैवी गुण वर्तमान है जिसके पीने से मनुष्यों का अनेकों प्रकार का रोग स्वतः दूर हो जाता है और यह झरना ठीक मन्दिर के पीछे से जहाँ महावीर जी की पूँछ भूमि को छूती थी, निकलता था। इस तरह मन्दिर से झरने की और झरने से मन्दिर की ख्याति बहुत दूर तक फैली हुई थी जिसके दर्शनार्थ लाखों यात्री दूर दूर से आते रहते थे।

महावीर जी के मन्दिर से निकलने के बाद जब महात्मा जी ने सेठ जी के साथ झरने का जल पान किया तो सचमुच उन्हें मालूम हुआ कि उनकी सारी थकान जैसे मिट सी गयी। उन्हें एक अजीब शान्ति का अनुभव होने लगा। झरना के किनारे-किनारे चलकर वे एक ऐसे समतल मैदान में आ पहुँचे जहाँ कुछ छोटे बड़े वृक्षों का एक झुरमुट था जिससे सटी हुई कई पहाड़ियां दूर तक चली गई थी जिनका दृश्य वहां से अत्यन्त सुहावना लग रहा था। अतः महात्मा जी सेठ के साथ वहीं कुछ देर तक के लिए विश्रामार्थ बैठ गये।

———

भी न निकला। वे प्रेम-विह्वल हो चरणों पर लोट पड़े और आँखों से बरबस ही प्रेमाश्रु टपकने लगा।

सत्संग का कार्य समाप्त हो जाने के बाद जब महात्मा जी ने महावीर जी के प्रसिद्ध मन्दिर को देखने की इच्छा व्यक्त की तो सेठ ने भी साथ में चलने की आज्ञा चाही। महावीर जी का मन्दिर एक पहाड़ी की ऊँची चोटी पर बना हुआ अत्यन्त प्राचीन मन्दिर था जिसके नीचे एक झरना अविकल गति से बहता रहता था जिसका स्वच्छ और शीतल जल उस पहाड़ी के लोगों का जीवन आधार था जिसके विषय में लोगों का कहना था कि इसके जल में ऐक ऐसा दैवी गुण वर्तमान है जिसके पीने से मनुष्यों का अनेकों प्रकार का रोग स्वतः दूर हो जाता है और यह झरना ठीक मन्दिर के पीछे से जहाँ महावीर जी की पूँछ भूमि को छूती थी, निकलता था। इस तरह मन्दिर से झरने की और झरने से मन्दिर की ख्याति बहुत दूर तक फैली हुई थी जिसके दर्शनार्थ लाखों यात्री दूर-दूर से आते रहते थे।

महावीर जी के मन्दिर से निकलने के बाद जब महात्मा जी ने सेठ जी के साथ झरने का जल पान किया तो सचमुच उन्हें मालूम हुआ कि उनकी सारी थकान जैसे मिट सी गयी। उन्हें एक अजीब शान्ति का अनुभव होने लगा। झरना के किनारे-किनारे चलकर वे एक ऐसे समतल मैदान में आ पहुँचे जहाँ कुछ छोटे बड़े वृक्षों का एक झुरमुट था जिससे सटी हुई कई पहाड़ियां दूर तक चली गई थी जिनका दृश्य वहां से अत्यन्त सुहावना लग रहा था। अतः महात्मा जी सेठ के साथ वहीं कुछ देर तक के लिए विश्रामार्थ बैठ गये।

———

जिसे देख वह भी उसी ओर मुड़ गया। पहुँच कर देखा कि महावीर जी की एक एक भव्य मूर्ति सामने मन्दिर में विराजमान है और सामने अखण्ड दीप जल रहा है। पण्डे फूल और माला यात्रियों के हाथों से ले लेकर "जजमान की जय हो" कह कर चढ़ा रहे हैं। सुन्दर और स्वादिष्ट लड्डू से कई थालें भरी हैं। बगल में रुपये और पैसों से पीतल के कई कटोरे भरे रक्खे हैं। मन्दिर में एक अलौकिक आलोक छाया है 'देख कर निर्मल का रोम रोम सिहर उठा। कुछ देर तक खड़े होकर वह उस अनुपम छवि का पान करता रहा पर दूसरे ही क्षण उसे पुनः उस रात की घटना याद हो आई और आखों में आँसू भर वह किसी अज्ञात दिशा की ओर चल पड़ा। कुछ दूर चलने पर उसने देखा कि उससे सटी हुई ही एक छोटी सी सुन्दर चौरस पहाड़ी है जो तरह तरह के सघन वृक्षों से आच्छादित है। प्रकृति की इस मनोहर क्रीड़ास्थली से वह बरबस ही मुग्ध हो उठा। धीरे धीरे वह इस पहाड़ी पर चढ़ने लगा और ऐसे स्थल पर पहुँचा जो जनरव से सर्वथा शून्य था जिसे देखते ही उसने मन में सोचा कि आज वह इसी रम्य पहाड़ी से कूदकर अपनी इह-लीला का सर्वदा के लिए अन्त क्यों न कर दे। वह इस समय पहाड़ी के अन्तिम छोर पर था जिसके पास ही एक सघन पहाड़ी वृक्ष था, जहाँ दो अधेड़ पुरुष और एक स्त्री बैठी आपस में वार्तालाप कर रहीं थीं। निर्मल उनको देखते हुए भी न देख सका। जैसे इस समय उसकी आँखों का सारा आलोक ही विलुप्त हो गया हो। वह क्षण भर के लिए वहीं रुका फिर आँखें खोला और देखा कि वे दोनों पुरुष और स्त्री उसकी ओर बड़ी तीव्र गति से बढ़ते चले आ रहे हैं। उसे ऐसा आभास हुआ कि जैसे सब उसके इस नीच कर्तव्य पर हँस रहे हों। कुछ क्षण के लिए वह फिर ठिठका और आँखे मूँद कर "ॐ गुरुदेव रक्षा कर" कह कर एकदम अपने को नीचे फेंक दिया। नीचे गिरने से पहले ही उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे किसी ने पीछे से आकर जकड़ लिया हो। वह बेसुध सा उस पुरुष की गोद में लुढ़क गया। जब कुछ होश हुआ तो देखा कि वह अधेड़ व्यक्ति अन्य कोई नहीं स्वयं उसके गुरुदेव

ही हैं। और बगल में एक दूसरा अधेड़ पुरुष बैठा धीरे धीरे उसे पंखा झल रहा है तथा एक स्त्री मुख पर पानी के छींटे। वह झट से गोद से हटकर चरणों में लिपट गया। प्रेमाश्रु से गुरुदेव का चरण भींग उठा। गुरुदेव ने पीठ पर हाथ सहलाते हुए उसे उठाया और उसके इस प्रकार आत्म-हत्या करने का कारण पूछा। निर्मल ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। सुनते ही गुरुदेव ने उस अधेड़ पुरुष की ओर एक निगाह भर देखा और निर्मल का हाथ उसके हाथों में पकड़ दिया। वह अधेड़ पुरुष जो अब तक पंखा झल रहा था, हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया और गद्‌गद कण्ठ से बोला "देव आज आपकी इस दयादृष्टि से मैं पूर्ण निहाल हो गया। मुझे सभी कुछ प्राप्त हो गया। मुझे अब और कुछ नहीं चाहिए" कहकर चरणों में लोट गया। गुरुदेव ने उसे उठाकर छाती से लगा लिया और यह कहते हुए चलने लगे "सेठ आज तुम सचमुच पूर्ण हो गये।" लो! अपनी गोद पूरी करो। आज से निर्मल तुम्हारा पुत्र हुआ कहकर उसपर एक आशा भरी दृष्टि डाली। सेठ निहाल हो उठा। उसके नेत्र सजल हो उठे। उसने निर्मल को गोदी में ले लिया और सेठानी पैसे उतार उतार कर झरने में फेंकने लगीं।

सातवाँ

निर्मल के हटने से सब लिपिकगणों में एक सनसनी-सी फैल गयी। कार्यालय में एक भय-मिश्रित आतंक-सा छा गया। फल यह हुआ कि सभी लिपिकगणों की कुशलता का ह्रास होने लगा। सब टालू कार्य करने लगे। परिश्रम और लगन के साथ जहाँ ये पूरे दिन

कार्य में जुटे रहते थे, अब आनाकानी कर दिन व्यतीत करने लगे। अस्थायी लिपिक मासिक पत्र-पत्रिकाओं में छपी "आवश्यकताओं" को देख-देख अन्य विभाग में जाने के लिए प्रार्थनापत्र भेजने लगे। तथा स्थायी लिपिकादि अपने (ट्रान्सफर) स्थानानन्तरण के लिए दौड़-धूप करने लगे। पूरे कार्यालय का ढाँचा ही लड़खड़ा उठा। कार्यालय की बढ़ती हुई इस गड़बड़ी को देख साहब ने प्रधान लिपिक को बुला कर बुरा-भला कहा और साथ ही अन्य लिपिकगणों को एक-एक खरी चेतावनी भी इस बात की दे दिया कि यदि वे सुचारुरूप से कार्य नहीं करेंगे तो उनके विरुद्ध अनुशासन-भंग की कार्यवाही की जायगी तथा उनकी सेवा-लेखा पुस्तिका और चरित्र-पंजिका को चौपट कर दिया जायगा आदि-आदि। इतना ही नहीं, बहुत से लिपिकगणों के कैरेक्टर रोल में Good for nothing, thouronghly useless, slow monker, slack आदि-आदि रिमार्क दे डाला। प्रधान लिपिक के चरित्र पंजिका में तो ऐसा रिमार्क दे दिया कि उस रिमार्क के पाने के बाद कोई भी मानी व्यक्ति मन लगाकर कार्य ही नहीं कर सकता था। फल यह हुआ कि तमाम क्लर्कों ने हड़ताल कर दिया। कार्यालय में ताला लग गया। पर अफसर भी अपने हठ का पक्का ही निकला। वह सारा कार्य अपने ही हाथों करने लगा। दोनों ही ऊँचे अधिकारियों के पास तार द्वारा इसकी सूचना दे दी और जाँच की कार्यवाही भी उन अधिकारियों द्वारा सद्यः प्रारम्भ हो गयी। इसमें एक गजटेड अफसर के मान-हानि का प्रश्न था अतः फैसला साहब के ही पक्ष में हुआ और तमाम लिपिक एक-एक कर वहाँ से स्थानान्तरित कर दिये गये। अग्नि में घी डालने से अग्नि और भी प्रज्वलित होती है। ठीक हुआ भी ऐसा ही। लिपिकगणों तथा चपरासियों पर खुले-आम अत्याचार होने लगा। किसी चपरासी को साहब की गाय, भैंस चराने की ड्यूटी लगती तो किसी को घास करने, काँटा मारने, बोरने, खिलाने आदि-आदि की। जो करने में आनाकानी करता उसको कोई

न कोई दोष लगा कर या तो मुअत्तल कर दिया जाता या मण्डलों में मण्डलाधीशों के नीचे कार्य करने को भेज दिया जाता। किसी बाबू को कहीं बाहर यदि किसी कार्यविशेष के लिए दो-चार दिनों के लिए भेजा जाता जो उसके पीछे दो-एक अपना सी० आई० डी० अवश्य भेज दिया जाता तो उसके प्रत्येक रहन-सहन की सूचना साहब को देता रहता। कार्य समाप्ति के बाद उस पर अनुपस्थिति और अवज्ञा का दोष लगाकर ऊँचे अधिकारियों को उसकी मुअत्तली के लिए लिख दिया जाता। क्या करते सब लाचार थे। अफसर-अफसर का ही साथ देते हैं। विभाग का यूनियन शक्ति सम्पन्न था नहीं इसलिए किंकर्तव्यविमूढ़ हो सब के सब विष पीने लगे। बापू के कल्पनाजनित जनता राज्य में अब भी नौकरशाही का इतना बड़ा अत्याचार बना रहेगा, किसी ने स्वप्न में भी नहीं सोचा था। फल यह हुआ कि बहुत से कुशल लिपिक भी स्तीफा दे दे दूसरे विभागों में जाने लगे, और जो ऐसा नहीं कर पाते थे वे मशीन के पुर्जे की भाँति जैसा साहब नचाते थे, नाचते थे। करने और न करने वाले सभी कार्य उन्हें करने पड़ते थे। "नौकरी पेट के लिए अवश्य की जाती है पर इज्जत बेंच कर नहीं। यदि एक को बेंच कर एक रहे तो भी गनीमत।" पर यहाँ तो पेट और पीठ दोनों मारी जाती थी। यह जानते हुए भी कि ये लिपिकगण राष्ट्र-निर्माण के उतने ही आवश्यक अंग हैं जितने वे साहब। जिनकी सहनशीलता और दयनीयता का उन्हें ही पता है जो स्वयं क्लर्क हैं। दिन में दोनों समय किसी तरह रूखी-सूखी रोटी मुँह तक लग जाती है। जिन पर बनिये और महाजन का हर समय कर्ज चढ़ा रहता है। वेतन मिला नहीं कि बाँट कर दूर हो गये और फिर पूरे महीने उधार का लेन-देन।

"काश वह भी दिन आता जब भारत में फैली हुई बेकारी की की समस्या सरकार हल कर पाती और मनमानी करने वाले अधिकारियों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करने में न हिचकती। सब एक ही न्याय-तुला पर तौले जाते। ऊँच-नीच का भेदभाव मिट जाता। सबमें राष्ट्रीय

भावना का उदय होता। शासक और शासित का भेदभाव मिट जाता, अफसरी और मातहती का गर्व दूर हो जाता। सब में आत्मीयता का भाव जागृत होता। तभी स्वतंत्रता पर किये गये बलिदानों का सार्थक महत्व होता" कहते-कहते प्रधान लिपिक ने ठण्डी साँस ली। "निर्मल तूँ बड़ा भाग्यवान था जो इस विभाग से चला गया। ईश्वर तुम्हें सफलता दें पर हम लोग कहाँ जाँय, सारी उम्र तो इसी विभाग में खपा दिया। यह कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि एक दिन ऐसे "डालडा" अफसरों से पाला पड़ेगा। यदि कोई मुझसे आज पूछे कि तुमने आज तक क्या किया, तो यहाँ कहना पड़ेगा कि "केवल आत्मा का हनन" जीवन में खतरा न लेने का परिणाम यह हुआ कि परिवर्तन होना रुक गया, जब कि परिवर्तन का दूसरा नाम विकास है। विकास के नष्ट होने से मनुष्य का व्यक्तित्व नष्ट हो जाता है और व्यक्तित्व का नष्ट होना ही वास्तविक मृत्यु है। काश! आज हम लोग म्रियमाण हो चुके हैं। हमारी कोई अपनी आवाज नहीं रह गई है। तेली के बैल की भाँति आँख पर अँधवट बाँधे दिन-रात चलते रहते हैं। कोई गति नहीं, कोई अपनी इच्छा नहीं और उसी दिन पत्र-पत्रिकाओं में लोगों ने पढ़ा कि अमुक कार्यालय के अमुक प्रधान लिपिक ने सर्वदा के लिए वैराग्य ले लिया।

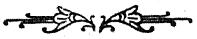

आठवाँ

घर पर आते ही सेठ गोविन्ददास ने मैनेजर को बुलाकर निर्मल को साथ कर दिया। मैनेजर के साथ-साथ निर्मल प्रत्येक कारबार की जानकारी करने लगा और जो कुछ भी कार्य मिलता बड़ी निपुणता तथा दक्षता के साथ सम्पन्न करने लगा। पर जब कभी भी एकान्त पाता फूट फूटकर जी भर रो लेता यहाँ तक कि उसकी आँखें भी सूज आतीं। यद्यपि सेठ के सामने जाने पर वह उन्हें हँसमुख ही दिखलाने का प्रयत्न करता पर उसकी सूजी हुई आँखों को देखकर कोई भी समझ सकता था कि वह किसी न किसी आन्तरिक पीड़ा से अत्यन्त पीड़ित और दुःखित है। सेठ ने उसे इस तरह कई दिनों तक देखा पर उनकी यह समझ में न आया कि उसके इस तरह दुःखित बने रहने का कारण क्या है? इसके विचार और रहन-सहन में तो अब तक परिवर्तन हो ही जाना चाहिये इसलिए कि अब उसकी पहले जैसी स्थिति न रही। कभी-कभी तो वह निर्मल को इतना उदास और विचारमग्न देखता कि उसे उसकी वास्तविक स्थिति का कुछ बोध ही न हो पाता। अन्त में सेठ ने उसके इस प्रकार बने रहने का कारण पूछा। पहले तो वह हीला हवाली करता रहा पर अकस्मात् उसकी आँखों से दो बूँद आँसू टपक पड़े और फिर इतना फबक-फबक कर रोने लगा कि सेठ के लाख कहने पर भी वह कुछ देर तक चुप न हो सका। बहुत देर बाद अपने को सँभालते हुए उसने कहा--पिताजी रो मैं इसलिए रहा हूँ कि हमारे दो बच्चे और स्त्री अभी उसी घर

में रह रहे हैं। भोजन नातकारे घर में एक छिटका अन्न भी नहीं था। वह कैसे रह रहे होंगे "कहते-कहते फिर फलक पड़ा। सेठ ने उसके आँसू पोछते हुए कहा "पगला! तुम इसी बात के लिए इतना रो रहा था। अब तक तुमने मुझसे यह सब बतलाया क्यों नहीं! अच्छा उठो यह लो सौ रुपये का नोट। कपड़ा बदलो और अभी चले जाओ, रुको मत, हाँ; ट्रेन कब मिलेगी।"

"साढ़े दस बजे" कहकर निर्मल ने एक संतोष की सांस ली।

"अच्छा तो अभी साढ़े नौ ही बजा है। यथेष्ट समय है। सब सामान बाँध लो। सितवा को भी साथ ले लो और मैं ड्राइवर को अभी बुलाता हूँ "कहकर सेठ भीतर चले गये और निर्मल कपड़े बदलने के लिए अपने ड्राइंग रूम में।

निर्मल जब तक कपड़े बदल कर आये उसके पूर्व ही कार फाटक पर आकर खड़ी थी। उस समय सितवा और सेठ मोटर में सामान रखने में व्यस्त थे। निर्मल को आया देख सेठ ने कहा "देखो मोटर में खाने-पीने का सारा सामान रखवा दिया है। रुपये कदाचित् कम पड़ें इसलिए ये डेढ़ सौ रुपये अपने साथ और लेते जाओ? और हाँ, बहू के लिए तो कुछ दिया ही नहीं कहकर पुनः भीतर चले गये तथा एक जोड़ा बनारसी साड़ी, ब्लाउज, एक नेकलस और सोने के दो कंगन लेकर उसके हवाले करते हुए कहा "देखो यह बहू के लिए हमारा पहला उपहार है। बच्चों के लिए कपड़े आदि वहीं खरीद लेना और यदि रुपये की कुछ कमी पड़े तो उसके लिए फिर तार देना। संकोच मत करना, समझे न! और जल्दी करो जाओ, बैठ जाओ मोटर में। सितवा तुम भी आ जाओ, देखो बाबू को कोई तकलीफ न पड़े गाड़ी में। सो मत जाना सामान से सतर्क रहना। गाड़ी में बड़े चोर लगते हैं।"

"नहीं सेठ जी, ऐसी कोई बात है" कह सितवा ने कार का दरवाजा खोल दिया। निर्मल ने चरण स्पर्श किया और सेठ ने मस्तक, यह कहते

हुए चूम लिया कि देखना बहुत शीघ्र ही लौटना, देर मत करना और मोटर स्टेशन की ओर दौड़ पड़ी ।

कोठी से स्टेशन की दूरी केवल एक मील थी। अतः पलक भाँजते ही कार स्टेशन के गेट पर आ लगी। कार को रोककर ड्राइवर यह कहते हुए उतर पड़ा कि बाबू जी टिकट कहाँ तक का लेना होगा ?

"अमुक स्टेशन का" कहते हुए निर्मल ने दस रुपये का एक नोट ड्राइवर को पकड़ा दिया। ड्राइवर चला गया और दो टिकट सेकेण्ड क्लास का लेकर शीघ्र ही लौट आया यह कहते हुए कि "बाबूजी चलिये ट्रेन स्टेशन पर आ ही रही है। अरे सितवा ! दो कुली तो कर ले कहकर ड्राइवर सामान कार से बाहर करने लगा और सितवा कुली के साथ सामान लेकर सेकेण्ड क्लास के डब्बे में रखने लगा जहाँ निर्मल पहले से ही आकर बैठ गया था। सितवा भी सामान रखवाकर एक कोने में बैठ गया। ट्रेन ने सीटी दी और फक-फक करती हुई चल दी। रास्ते में न तो सितवा ने निर्मल से ही कुछ पूछा और न निर्मल ने उससे। अकस्मात् निर्मल ने निस्तब्धता को भंग करते हुए कहा "सीता तैयार हो जाओ, यह देखो स्टेशन आ गया और वह कुली को बुलाकर सामान नीचे उतारने लगा। निर्मल भी स्टेशन के बाहर आ टाँगा स्टैंड पर खड़ा हो गया। उसे देखते ही टाँगे वाले उसकी ओर दौड़ पड़े "बाबू जी इधर आइये—मैं चलता हूँ—कहाँ जाना है ।"

"नहीं बाबू जी इस पर चलिए—कोई सवारी नहीं लूँगा—बस आप ही को लेकर चल दूँगा।"

निर्मल बाबू चुपचाप टाँगे वालों की तूँ, तूँ, मैं, मैं सुनने में लगे। तब तक सितवा भी मय सामान के वहाँ आ गया तथा एक टाँगे पर रखने लगा। "सब सामान आ गया सीता।"

"हाँ बाबू जी" सितवा ने धीमे स्वर में उत्तर दिया।

कुलियों को पैसे देते हुये निर्मल ने टाँगे वाले से चलने को कहा।

"बस इतना ही बाबू जी, इतने बड़े आदमी हैं। अरे आप ही लोगों से तो पेट चलता है" कहकर कुलियों ने हाथ फैला दिया।"

"तो कितना दूं ?"

"जितना समझें बाबू जी—आप से क्या कहना है ?"

"अच्छा लो ! अब खुश"

"हाँ बाबू जी। जाइये ईश्वर आप का भला करे। और टाँगा गांधी-नगर की ओर टप टप करते हुए भागने लगा।

—❀—

नवाँ

जब से प्रधान लिपिक बाबू रमणीकलाल यहाँ आये हैं, तब से इस कार्यालय का कायापलट सा हो गया है। साहब बहादुर जहाँ हर समय अलफ बने रहते थे अब कुछ ढीले से दिखलाई पड़ने लगे हैं। कारण चाहे जो भी हो पर एक आवश्यक बात जो सामने दिखलाई पड़ती थी वह यह कि "वार्षिक नीलाम की तिथि निकट आती जा रही थी। साहब की यह आशंका दिनों दिन बढ़ती जा रही थी कि यदि वे अपने रूखेपन में कोई परिवर्तन न किये तो सम्भव है कि अन्य विगत वर्षों की अपेक्षा इस साल ठीके में मूल्य की बोली अनुमानित आय से कम गिरे जिसका प्रभाव उनपर तथा सरकार पर भी पड़े बिना न रहे। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य बातें भी ऐसी थीं जिसको सोचकर वे कुछ नरम से दीखने लगे थे पर सताये हुए कर्मचारियों तथा पुराने ठीकेदारों के हृदय में उनके अत्याचारों की जो चिनगारी पड़ी थी, वह अब भी ज्यों की त्यों

धधक रही थी। केवल अवसर की ताक में सब चुपचाप अत्याचार को पी रहे थे। वे किसी भी तरह इस नृशंश तथा अत्याचारी का अन्त देखना चाहते थे।

प्रधान लिपिक ने डिविजन में आते ही पहले साहब के वैयक्तिक जीवन को जानना चाहा। साहब में सबसे बड़ी त्रुटि जो उन्हें उस समय मिली वह यह कि वे अब तक अविवाहितावस्था में ही थे। शादी न होने का चाहे जो भी कारण रहा हो पर एक मुख्य कारण यह था कि वे बहुत कुछ भद्दी सूरत के थे। ठिगने से, दुबले पतले, सिकिया जवान, स्वभाव में मात्रा से अधिक चिड़चिड़ापन तिस पर तुर्रा यह कि वे बधू चाहते थे स्वर्ग की परी सी। चाहे भले ही उन्हें कोई पसन्द करे या न करे। उस दिन बातचीत के सिलसिले में जब वे अन्य दिनों की अपेक्षा कुछ अधिक प्रसन्न मालूम पड़ थे, इस तरह का अपना विचार भी प्रधान लिपिक से प्रकट कर दिया। प्रधान लिपिक था भी बड़ा चतुर और बुद्धिमान्। उसने तुरन्त ही इस बात को ताड़ लिया। जैसा कि उसका पहले से ही ऐसा अनुमान था। अतः उसे साहब के रूखेपन का बहुत कुछ कारण मालूम हो गया।

उस समय तक वार्षिक नीलाम का समय निर्धारित कर दिया गया था। समस्त पुराने ठेकेदारों के नाम वार्षिक नीलाम की सूची तथा नियमावली वितरित कर दी गयी थी। सम्बन्धित कर्मचारी गणों के नाम प्रधान लिपिक ने व्यक्तिगत रूप से एक एक पत्रावली साथ ही इस विषय की भी डाल दी कि सब लोग पुराने ठीकेदारों को साथ लेकर एक दिन पूर्व ही अमुक स्थान पर एकत्रित हों। अज्ञा का यथावत् पालन किया गया जिसमें यह बात निर्धारित की गई कि इस साल बड़े बड़े लाठों का ठेका शहर की सर्वसुन्दरी और धनीमानी नर्तकी श्रीमती नीरजा को दिलाया जाय जिसकी प्रत्येक गतिविधि अत्यन्त गुप्त रक्खी जाय आदि···आदि···। यदि साहब ठेका देने में कुछ आनाकानी करें और जमानत, निर्धारित जमानत से अधिक बढ़ा दें तो धन से भी उसकी सहायता की जाय जिसका सब लोगों

ने एकमत से समर्थन किया। इस कार्य के लिए कुछ विशेष व्यक्ति ऐसे चुने गये जो निर्धारित तिथि पर नीरजा को साथ ले ठेके में अवश्य उपस्थित हों।

धीरे धीरे घड़ी ने दस बजाया। सब बाबू लोग प्रधान लिपिक के साथ नीलामस्थल पर आकर अपनी अपनी ड्यूटी पर डट गये। कुछ एक ठीकेदार पहले से ही विराजमान थे और कुछ आते जा रहे थे। प्रथम पंक्ति की अगली सीट, पर, जो साहब बहादुर के ठीक सामने पड़ती थी, एक सम्भ्रान्त महिला आकर चुपचाप बैठ गई।

साहब ने देखा और फिर अपनी आँखें नियमावली में गड़ा लीं यह सोचकर कि कदाचित् किसी ठेकेदार की धर्मपत्नी हों। नीलाम की प्रणाली प्रारम्भ हो गई। पहले कुछ नियम पढ़े गये। बाद में बोली बोलने की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। पहले दो चार छोटे छोटे टुकड़ों की बोली प्रारम्भ हुई तो नीरजा एक एक कर सब ठीकेदारों से बोली बढ़ा चढ़ा कर बोली। साहब तो अवाक् से रह गये। कभी उस नीरजा की ओर देखते तो कभी ठेकेदारों की बैठी हुई भीड़ की ओर, फिर कभी प्रधान लिपिक तथा अन्य उपस्थित कर्मचारियों की ओर। वे समझ ही न पाते थे कि ऐसी परिस्थिति में वे क्या करें? अन्त में उन्होंने प्रधान लिपिक से पूछा कि "कहिए बड़े एक महिला इतने बड़े बड़े टुकड़ों का नीलाम ले सकती है?"

बड़े बाबू ने कहा "ऐसा तो कहीं नियम नहीं मिलता कि महिलाएँ ठीका न लें। आपको रुपये से प्रयोजन..... । चाहे ठीका कोई भी ले। यदि आपको आशंका हो तो जमानत की दर बढ़ा दीजिए।"

साहब ने "हूँ" करके नीरजा के लिये २० प्रतिशत जमानत जमा करने का आदेश दिया। अब संध्या हो चली थी। सूर्य भगवान् अस्ताचल की गोद में विश्रामार्थ बढ़ते जा रहे थे। पक्षियों का झुण्ड गगनमण्डल को चीरता हुआ बड़ी तीव्र गति से अपने-अपने नीड़ों की ओर बढ़ता जा रहा था। कृषक हल-बैलों के साथ खेतों से लौट रहे थे। गायें हुंकार करती हुईं घर की ओर दौड़ी आ रही थीं। ठीक उसी

समय साहब बहादुर नीलाम की कार्यवाही बन्द कर चाय पीने भीतर चले गये।

जब तक साहब बहादुर चाय पीने में लगे थे तब तक लिपिकगणों ने सब ठेकेदारों की जमानत एक-एक कर जमा कर लिया तथा इकरार-नामें की शर्तें भी पूरी करा लीं। इकरारनामें आदि की शर्तें तथा जमानत के रुपये यदि किसी के अबतक नहीं जमा हुए थे तो केवल नीरजा के। जो चुपचाप मूकवत अपनी कुर्सी पर बैठी थी। एक-एक कर सारे ठीकेदार चले गये। धीरे-धीरे घड़ी ने ६ बजाया। तब कहीं जाकर साहब घर से बाहर निकले। नीरजा ने उठकर नमस्कार किया और कहा कि साहब अभीतक न तो हमारी जमानत ही जमा हुई और न तो इकरारनामें पर हस्ताक्षर ही हुए हैं।

"अच्छा! रुकिए! मैं अभी सब ठीक किये देता हूँ और हाँ! बड़े बाबू क्या बात है?"

"कुछ नहीं साहब! यही आपकी प्रतीक्षा हो रही थी। सब तैयार है, बस आपके हस्ताक्षर की देर है।"

"तो लाइये न! मैं अभी किये देता हूँ और हाँ आप जमानत का रुपया जमा करा लीजिए।"

रुपये आदि के गिनने तथा अदलने-बदलने में करीब एक घण्टे का समय और लग गया। तबतक अन्य दूसरे कर्मचारी भी नौ-दो-ग्यारह हो गये। केवल प्रधान लिपिक, एकाउण्ट क्लर्क तथा साहब भर रह गये। रुपया जमा हो जाने के बाद एकाउण्ट क्लर्क भी चलते बने। तबतक घड़ी ने ग्यारह बजा दिया। खजाने का पहरा पुलिस के हवाले करते हुए बड़े बाबू जब मैदान की ओर मुड़े तो देखा नीरजा चुपचाप टहल रही है और साहब वहीं पास में अपनी कुर्सी पर बैठे कुछ लिख रहे हैं।

"हाँ तो मिस नीरजा अब आपका सब काम समाप्त हो गया। कदाचित् आप रसीद भी पा गईं?"

"जी हाँ! नीरजा ने मधुर शब्दों में उत्तर दिया।"

वचन की मधुरता ने साहब को एक बार उसकी ओर आकर्षित कर लिया और एक सेकेण्ड के लिए वे कलम को रोककर नीरजा की ओर देख लिए। फिर बड़े बाबू को बुलाकर उनके कानों में न जाने क्या कहा जिस पर बड़े बाबू भी जी हाँ! जी हुजूर! कहकर फिर नीरजा के पास दौड़ आये और नीरजा से पूछा हाँ तो इस समय आप अकेली घर पर चली जा सकती हैं न? "सुनते ही नीरजा मुस्कुरा उठी। उसके चन्द्रवत् मुख की सुन्दरता उस मुस्कान से और भी दूनी बढ़ गई। प्रधान लिपिक उत्तर की प्रतीक्षा में कुछ क्षण तक उसके चन्द्रवत् मुख की सुन्दरता का पान करते रहे रहे। उन्हें ऐसा आभास हुआ कि सचमुच इन्द्रलोक की कोई अप्सरा है जो बड़े-बड़े मनस्वियों की तपस्या को भंग करने के हेतु इस भू-मण्डल पर अवतरित हुई है। उस समय वे इस बात को जैसे भूल ही गये कि उन्होंने उससे क्या पूछा था तब तक नीरजा ने उत्तर दिया "बाबूजी क्या आपके इतने बड़े बँगले में मुझे दो घण्टे के लिए भी विश्राम का स्थान नहीं मिल सकता?"

"अवश्य! अवश्य! क्यों साहब! हाँ! हाँ! कोई बात नहीं। अमुक कमरा खाली करवा दीजिए। खाने-पीने का प्रबन्ध मैं अपने यहाँ से करवा देता हूँ और सुनो गुलजारी! जल्दी से अमुक कमरा ठीक करा दो तथा फेकन से कह दो कि एक आदमी का भोजन और बढ़ा दे।"

"धन्यवाद साहब! तकलीफ करने की कोई आवश्यकता नहीं। मुझे भूख नहीं लगी है। केवल एक चारपाई भर का प्रबन्ध करवा दीजिए·····।"

"नहीं कष्ट कैसा। यह तो आप ही लोगों का·····कहते-कहते बड़े बाबू रुक से गये। तबतक गुलजारी कमरा ठीक करा के आ गया और नीरजा से कहा चलिए हुजूर! सुन कर नीरजा गुलजारी के साथ उक्त कमरे की ओर चली गई। बड़े बाबू सलामी दगाये और चलते बने। साहब उठकर भीतर चले गये।

—:※:—

हिन्दुस्तानी एकेडमी, उ० प्र०
६२५२
पुस्तकालय
इलाहाबाद

दसवाँ

गाँधी नगर में टाँगा आकर रुक गया। वहाँ से एक संकरी सी गली सीधे पूरब की ओर जाती थी। गली के दोनों ओर खपरैल के बने पुराने प्रकार के मिट्टी के घर अपनी प्राचीनता की स्मृति में अब भी गिरी पड़ी अवस्था में तरुणता की आशा लगाये विहँस रहे थे। कच्चे तथा खपरैल के छाये हुये गृह इसलिए थे कि उसमें अधिकतर नौकरी पेशा के मध्यम और निम्न कोटि के ही व्यक्ति रहते थे। साहु महाजनों का नाम भी नहीं था। कहीं कहीं दाल परचून की दूकाने अवश्य थीं जो उस गली के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति भर कर दिया करती थीं। निर्मल टाँगे से उतरकर गली में बढ़ने लगा। कुछ दूर चलने के बाद वह सितवा को (जहाँ एक छोटा सा कच्चा चबूतरा बना था, जिसपर उस महल्ले के लोग जब कभी भी उनमें कोई झगड़ा हो पड़ता था, वहीं इकट्ठे होकर ते तमाम कर लिया करते थे) बिठला कर आगे बढ़ा। रात के नौ बज चुके थे। लोग खा पीकर ऊँघने लग गये थे पर किसी किसी के घर में अब भी दीपक टिमटिमा रहा था जिससे कभी कभी कुछ एक शब्द भी सुनाई पड़ जाते थे। इतनी जल्दी उस महल्ले के लोग इसलिए सो जाते थे कि उक्त महल्ले में अधिकतर नौकरी पेशा वाले ही व्यक्ति रहते थे जो दिनभर काम करने के बाद सूर्य डूबे घर आते और थोड़ा बहुत जो भी रूखा सूखा मिला खाकर लम्बी तान गये। ज्यों-ज्यों घर समीप आने लगा, निर्मल की गति में जैसे कुछ अवरोध सा होने लगा। वह कुछ आगे बढ़ता फिर रुक कर न

जाने क्या सोचने लगता। फिर तुरत ही और आगे बढ़ता और कान लगाकर फिर कुछ सुनना चाहता। जब कोई शब्द न सुन पड़ता तो फिर बड़ी तीव्रता से आगे बढ़ने लगता। उसका हृदय उस समय धड़क रहा था। मानसिक उद्वेग तीव्रतर हो रहा था। गति में कोई आकर्षण नहीं रह गया था। उस समय उसकी गति उस बालक के समान हो रही थी जिसके हाथ की मिठाई कोई छीनकर भाग गया हो और बालक मिठाई वाले के पीछे इस आशा से दौड़ रहा हो कि कदाचित् वह उसकी मिठाई उसे लौटा दे। इस तरह थोड़ी देर बाद निर्मल अपने घर के बिल्कुल समीप आ गया। घर में बाहरी ओर खिड़की कटी हुई थी जो हर समय खुली रहती थी। निर्मल खिड़की से भीतर की ओर झाँका पर न तो कोई दिखलाई दिया और न तो उसे कोई शब्द ही सुनाई पड़ा। खिड़की से हटकर पुनः द्वारपर आकर किवाड़ खड़खड़ाया। पहले तो कोई भी न बोला पर जब वह दूसरी बार पुनः किवाड़ खड़खड़या तो भीतर से एक ऐसा करुणापूर्ण शब्द सुन पड़ा जो मालूम पड़ता था कि किसी बहुत दिनों की रोगिणी का क्षीण शब्द है जिसके लगातार बहुत दिनों तक उपवास करते रहने से शरीर के साथ ही साथ वाणी में भी क्षीणता आ गई है।

"मैं हूँ निर्मल" कहकर तीसरी बार उसने फिर दरवाजा खड़खड़ाया। "निर्मल" शब्द सुनते ही उमा के शरीर में न जाने कहाँ से बल आ गया। वह झटाक से उठी और आकर दरवाजा खोल दिया। सामने देखा तो निर्मल खड़ा है। उसे देखते ही उमा की आँखों से झरझर आँसू गिरने लगा। गला अवरुद्ध हो गया। वाणी मूक हो गई। जबान पर जैसे ताला मार गया। वह एकटक निर्मल को कुछ देर तक देखती रही। उसका आराध्य देव सामने खड़ा था। वह क्या करे कुछ समझ ही न पा रही थी। उस समय उसकी गति उस परम भक्त शबरी सी हो रही थी जिसकी उग्र तपस्या के अनन्तर भक्तवत्सल भगवान राम स्वयमेव प्रगट हो आये थे जिसके पास आरती उतारने के लिए न तो कोई साधन था और न तो कोई

सामग्री ही। उसने झुक कर चरणरज लेनी चाही पर कँप कर धम से गिर पड़ी। निर्मल इसका कारण समझ रहा था। उसने झट से उठाकर उसे अपनी भुजाओं में भर लिया। उमा को उस समय ऐसे लग रहा था जैसे वह भक्त प्रहलाद की भाँति करुणामय भक्त वत्सल की गोदी में सो रही हो। निर्मल ने उठाकर उसे भीतर एक चारपाई पर बिठा दिया। घर में अँधेरा रहने के कारण उसके आने की खबर बच्चों को न लग सकी। निर्मल ने "टार्च" के प्रकाश में लड़कों को देख लिया जिनका केवल कंकाल मात्र रह गया था। उसकी आँखों से आँसू चू पड़े। वह इस समय अपने को सँभाल न सका। जाकर झट से बच्चों को गोद में उठा लिया। उन्हें पुचकार कर जगाने लगा सुना उठो देखो तुम्हारे लिए बहुत सी मिठाइयाँ लाया हूँ उठो! उठो! आँखें खोलो! बच्चों ने मिठाइयों का नाम सुना और वह भी पूर्ववत् पहचाने हुये बाबू जी के शब्दों में और झट से आँखें खोल दो उस समय निर्मल ने अंगूर, सेव, तथा मिठाइयों से भरी हुई टोकरी को उनके सामने खोल दिया।

निर्मल ने दीपक जलाया। दीपक के मधुर प्रकाश में उसने देखा उमा को जिसका शरीर केवल कंकाल मात्र रह गया था। उसकी चलने फिरने की सामर्थ्य उस समय बिल्कुल जाती रही थी। वह चारपाई पर पड़ी मूकवत् एकटक अपने आराध्य देव की ओर देखने लगी। आँखों से झर-झर आँसू बहने लगे। निर्मल ने एक प्याले में मुसम्मी का रस निचोड़ा और उमा से झट से पी जाने को कहा "वह बिना कुछ कहे उसे पी गई पर उस एक प्याले शरबत ने उसकी भूख को और भी जागृत कर दिया तब तक निर्मल ने दो गिलास शर्बत अलग-अलग अंगूर और बेदाने का निचोड़ कर रख लिया था, झट से वह उमा के होठों पर लगा दिया। उसे पीते ही जैसे उसमें कोई नई जीवनी शक्ति आ गई हो। वह झट से चारपाई पर उठकर बैठ गई और निर्मल की गोदी में सिर रखकर बहुत देर तक फबक-फबक कर रोती रही। निर्मल की भी आँखों से अश्रु प्रवा-

हित होने लगा। उस समय उसका हृदय बैठा जा रहा था। उमा के सिर की सुन्दर लटाओं को जो किसी समय फूलों से गुथी आकर्षण की केन्द्र थीं आज बिना संवारे वैसे ही बिखरी पड़ी थीं। उसकी दशा उस समय परम तपस्विनी भगवती गिरजा देवी के समान हो रही थी जो कई हजार वर्षों तक केवल पत्ते खाकर ही जीवन संभाले रहीं और संसार में अपर्णा नाम से विख्यात हुईं। निर्मल ने अपनी इस सती साध्वी पत्नी को उठाकर हृदय से लगा लिया। उसके अश्रु प्रवाह को अपनी सुन्दर रेशमी रूमाल से पोंछ डाला जो 'सेंट' की सुगंध से तर थी। उसके बहुत कुछ समझाने पर उमा चुप तो हो गई पर उसकी हिचकियाँ अब भी पूर्ववत् बनी रहीं। वह कुछ कहना चाहती थी पर गला अवरुद्ध हो जाने से कुछ भी कह सकने में असमर्थ हो रही थी। कुछ साहस करके उसने इतना भर कहा "एक दिन तो जी में ऐसा आया कि बच्चों को साथ लेकर कुएं में कूद पड़ूँ और सदा के लिए अपनी इहलीला को समाप्त कर दूँ। इसलिए कि मैं तो बिना खाये भी रह सकती थी पर इन नन्हे दुधमुँहे बच्चों को बिना खाये देख कर छाती फटी जाती थी पर अब तक यह सोचकर रुक रही थी कि एक दिन मरना तो वैसे ही है इस तरह आत्म-हत्या करके अधोगति को प्राप्त होना ठीक नहीं। फिर आप यदि आते तो क्या कहते? अब तक यही विश्वास लेकर जीती रही कि कदाचित् किसी दिन हमारे आराध्य देव का इस तरह जीते रहने से दर्शन भी हो जाय और पुनः फफक-फफक कर रोने लगी जिसे सुनकर निर्मल का कलेजा जैसे फटने लगा। उसे ऐसा मालूम हुआ कि उसके नीचे से पृथ्वी खसकती जा रही है और उसका अन्त होना चाहता है। उसकी मानसिक चेतना जैसे क्षीण-सी होने लगी। उसकी आँखों के आगे अंधेरा सा छा गया। उसने सोचा इन सब दुखों का एकमात्र कारण वह ही है और वह उसी चारपाई पर एक क्षण के लिए सो गया। क्षण भर सोने के बाद जैसे उसमें फिर से चेतना आ गयी हो। वह उठा और उमा से अपनी सारी कथा को कह डाला तथा उसके गले में एक स्वर्णिम नेकलेस

डाल दिया। उस समय उमा ने मुसकुराकर उसके गले में अपनी बाँह को डाल दिया। निर्मल निहाल हो उठा। तब तक सितवा ढूँढ़ते-ढाँढ़ते किसी तरह मय सामान के दरवाजे पर आकर पुकारा "बाबू जी।"

—o—

ग्यारहवां

"कहिए कोई कष्ट तो नहीं मिस नीरजा" साहब ने शिष्टाचार भरे शब्दों में पूछा।

"सब आप की दया है" कहते हुए नीरजा चारपाई से उठकर कुर्सी पर बैठ गई और साहब भी पास की रखी हुई दूसरी कुर्सी को खींचकर बैठ गये। कुछ देर तक दोनों चुप रहे। इसी तरह चुप रहना नीरजा को असंगत सा लग रहा था। बातचीत करने का वह कोई बहाना ढूँढ़ रही थी। कुछ देर सोचने के बाद उसे एक बात याद आ गई और उसने हँसते हुए कहा "एक बात पूछना चाहती हूँ। बताने में आपको कोई कष्ट तो नहीं?"

"कष्ट किस बात का, पूछिए न। जरा जल्दी कीजिए इसलिए कि दिन भर के अथक परिश्रम से मैं बहुत अधिक थक गया हूँ। रात भी अधिक बीत चली है। आप अच्छी तरह भोजनादि कर चुकीं, या नहीं, इस बात को जानने के लिए ही इधर आ पड़ा था।

सुनते ही नीरजा ने इसके लिए उन्हें धन्यवाद दिया और कहा "मैं देख रही हूँ कि बँगले में न तो मेम साहब और न तो कोई बाल बच्चे

ही दिखलाई पड़ रहें है" और मुस्कुरा उठी । नीरजा की यह बात उस समय साहब को तीर सी लगी । वे तिलमिला उठे पर प्रश्न का उत्तर हाँ या नहीं कुछ तो देना ही था ।

"मैं अब तक विवाह बन्धन में नहीं फँसा हूँ" कहते हुए साहब कुछ खिन्न से हो गये ।

"अच्छा ! क्यों आप इसका कारण बतलाने की कृपा कर सकते हैं ?" नीरजा ने उत्सुकता पूर्ण शब्दों में पूछा ।

साहब कुछ देर तक चुप रहे और फिर कहना प्रारम्भ किया "मैं विवाह को एक सामाजिक संस्था समझता हूँ जिसका आधारभूत सिद्धान्त विभिन्न, अपरिचित, तथा बहुत कुछ अनमेल पारस्परिक सम्बन्धों को एक ही ढाँचे में ढालने की रक्षात्मक प्रेरणा है । एक गोलमोल ठीका है जिसमें आबद्ध पुरुष, स्त्री के भरण पोषण और रक्षा का भार वहन करने के लिए प्रतिश्रुत होता है, "कहते हुए साहब कुर्सी से उठने लगे । नीरजा उस समय साहब के मुख मण्डल पर बनते बिगड़ते परिवर्तनों को बड़ी सूक्ष्मता से पढ़ रही थी । वह समझ गई कि इस समय साहब को सबसे अधिक किस बात की आवश्यकता है जिसने विवाह ऐसे जीवन के आवश्यक प्रश्न पर इतनी उदासीनता भरी वाणी में उत्तर दिया है ।

नीरजा ने कहा "क्षमा करियेगा साहब मेरी ढिठाई को । आपने जो अभी-अभी विवाह की परिभाषा बतलाई है, पूर्ण होते हुए भी अव्यावहारिक है इसलिए कि विवाह का सम्बन्ध शुद्ध सामाजिक ही नहीं होता, वह आत्मिक भी होता है और आत्मा प्रेम की समतल भूमि पर नियन्त्रित रूप से विचरने वाली अक्षय पियूषवाहिनी सरिता है जिसमें प्रेम और यौवन परस्पर लोल लहरियाँ हैं ।' कह कर नीरजा ने एक दौड़ती दृष्टि साहब पर डाली ।

"पर यौवन आत्म विस्मृति है, भुलावा है, मृग मरीचिका मय आकुल और अतृप्त पिपासा है" कहते-कहते साहब गम्भीर हो गये ।"

"ऐसा सम्भव हो सकता है साहब ! पर मेरे मतानुसार यौवन, एक तन्द्रिल विकास है, मादकता के अवगुण्ठन में आवेष्ठित एक अनियन्त्रित आवेग है जो प्रेम से ही नियंत्रित होता है। हाँ यह अवश्य होता है कि उस समय के प्रेम में नियंत्रण बहुत कम होता है। जहाँ नियंत्रण नहीं वहाँ अराजकता का नग्न-ताण्डव अपेक्षित है इसलिए यौवन आत्म-विस्मृति नहीं बल्कि जीवन का अराजकतापूर्ण और उच्छृङ्खल प्रबल उद्वेग है और इस प्रबल उद्वेग की रोकथाम विवाह-बन्धन के प्रबलतम बाँध से ही होती है। इस तरह समाज में विवाह-बन्धन प्रचलित हुआ।"

"तब तो आपके मत से विवाह ही प्रेम के स्थायित्व का आधार हुआ" कहकर साहब एक निगाह में नोरजा को ऊपर से नीचे तक देख गये। उन्हें उसके पतले-पतले नवाङ्कुरित कोपल सरीखे लाल होठ, सुन्दर नासिका, दाड़िम सी दंतपंक्तियाँ, सारिका सरीखी लम्बी और सुन्दर नासिका जिसके देखने से ऐसा प्रतीत होता था कि सारिका दाड़िम को चुगने के लिए आकुल है पर अधरों के अवरोध से ठिठक कर चुगने की क्रिया से विरत हो घात लगाये शान्त बैठा है; सुन्दर और गुलाबी गालों पर यौवन स्वयं फूट पड़ा था, आकर्षक और बड़े-बड़े मृगी से सुन्दर और मोहक नेत्र, तथा भाल पर काला टीका ऐसा प्रतीत होता था जैसे चन्द्रमा में पड़ा हुआ अव्यवस्थित रूप से काला धब्बा ब्रह्मा ने इसी बिन्दु के निर्माणार्थ छीन लिया हो, सर से जो लटा छूटकर कुचों पर लटक रही थी, ऐसा प्रतीत होती थी जैसे महादेव जी की दो पिण्डियों को दो नागिनियां प्रेम-विभोर हो पूजने के लिए बरबस ही निकल पड़ी हों; पतली-सी सुन्दर कटि, गोल और सुन्दर, आकर्षक उरोजों का उभार, पीन नितम्ब जिसके देखने से ऐसा लग रहा था जैसे कामदेव ने इसी के निर्माणार्थ कटि की स्थूलता को कम कर दिया हो, उस समय वह ऐसी प्रतीत हो रही थी जैसे अर्जुन के शयन-कक्ष में उर्वशी। पर साहब उस समय उस पर स्वयं न्योछावर हो रहे थे

वे एकटक उसकी उस सुन्दरता को मूकवत निरखते रहे। नीरजा ने भी साहब की ओर देखा और मुसकराते हुए कहा "जी नहीं विवाह प्रेम के स्थायित्व का आधार ही नहीं बल्कि एक नियन्त्रित जीवित आदेश है जिस पर चलकर स्त्री और पुरुष एक दूसरे को अच्छी तरह समझने की चेष्टा करते हैं, एक दूसरे के कदम पर कदम रखकर जीवन की मंजिल को तै करने के लिए अबाध गति से बढ़ते हैं जिसमें कोई भेद नहीं होता, कोई छिपाव और दुराव नहीं दिखलाई पड़ता। हाँ यह बात अवश्य है कि इसके प्रथम चढ़ाव में शुद्ध प्रेम से कहीं अधिक वासना अभिहित यौवन का अपरिमेय खुमार छलकता है। पर जब यह खुमार धीरे धीरे शिथिल पड़ जाता है तब शुद्ध और पुष्ट प्रेम का अभ्युदय होता है। इसी समय पुरुष और स्त्री परस्पर कर्त्तव्य के बन्धन से बँधते हैं "कहते कहते नीरजा ने साहब की ओर एक भरी निगाह से पुनः देखा। साहब का रोम-रोम सिहर उठा। जीवन में वे पहली बार निशा के ऐसे घोर, निस्तब्ध और एकाकीपन में एक ऐसी सुन्दर रमणी से इस तरह घुल-घुल कर सम्भाषण किये थे जो शहर की केवल नर्तकी थी, और नर्तकियाँ जो विवाह-बन्धन को केवल स्थिति विशेष का एक कड़ुआ धूत्र भर समझती हैं तथा जो इस विवाह को कोरी परतन्त्रता, आत्मसमर्पण और लाचारी के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझतीं, इस तरह विवाह का समर्थन करते देख, साहब ने नीरजा की ओर आश्चर्य भरी दृष्टि से देखा। इस समय नीरजा स्वयं भी साहब के मुख की ओर एक अवाक् दृष्टि से, दोनों की आंखें एक हो गईं।

साहब कुछ कहें कि नीरजा बीच में ही बोल उठी "कहिए साहब आपने अभी तक विवाह क्या इसीलिए नहीं किया !"

"विवाह क्या पुरुष और स्त्री के लिए आवश्यक होता है ?" साहब ने कहा।

"अवश्य" नीरजा ने कहा।

"पर मैं उस विवाह को नहीं मानता जो केवल माता-पिता को

इच्छा पर ही अवलम्बित हो और मेरे विवाह में यह एक मुख्य कारण रहा है" कहते-कहते साहब ने अपनी निगाहें नीची कर लीं।

"अच्छा ! अब मैं समझ गई कि आप केवल वासना अभिहित रूप के पुजारी मात्र हैं न कि गुण और कुल के। पर आपको मालूम होना चाहिए कि ज्यों ही रूप की चकाचौंध धूमिल पड़ जाती है स्थिति अत्यन्त विकट बन जाती है। माता पिता सब कुछ विचारकर ही दो भिन्न कुलों को एक बन्धन में बाँधते हैं जिसमें पुरुष और स्त्री बनते हैं उसके उपकरण। पहले बन्धन तो अवश्य अपरिचित सा मालूम पड़ता है जो पीछे परस्पर सहानुभूति और प्रगाढ़ प्रेम में बदल जाता है और तब दोनों की दो भिन्न धाराएँ मिलकर एक हो जाती हैं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में विवाह के विषय में माता पिता को इतनी छूट दे दी गई है। अब रही प्रेम की बात। वह परस्पर दो आत्माओं के एक हो जाने को कहते हैं। पर आप जिस विवाह की चर्चा कर रहे हैं वह है रूप का विवाह, वासना की खुमार, जिसमें केवल वासना का आदान प्रदान भर होता है। वहाँ शुद्ध और सात्विक प्रेम नहीं होता। इस स्थल पर स्त्री, पुरुष की बराबरी करने की भावना रखती है। वह पुरुष को उछालती है एक गेंदे के समान और तब वह स्वयं आकर्षण बनती है। इस आकर्षण के समय वह उस पर अधिकारिणी बनना चाहती है। पुरुष ढील देता है और धीरे धीरे वह स्त्री का अनुगामी बनता जाता है जब कि पुरुष के पुरुषत्व को उसका स्वामी और स्त्री के समर्पण को उसका अनुगामी बनना चाहिए। यही कारण है कि पाश्चात्य देशों में आये दिन तलाक देना भी एक कानून का रूप धारण कर लिया है।" कह कर नीरजा चुप हो गयी।

"पर आप विवाह के इस प्रकार पक्ष में रहते हुए भी वैवाहिक बन्धन में अब तक अपने को क्यों नहीं बाँध सकीं?" साहब ने प्रश्नात्मक-शब्दों में पूछा।

"इसलिए कि आजतक मेरे पास जितने भी पुरुष आये या तो आत्म समर्पण की भावना से या कामुकता के समनार्थ।"

"तो आप पुरुष के स्वामीपन क पुजारिन मालूम पड़ती हैं, साहब ने कहा।

अवश्य ! अवश्य ! इसलिए कि स्त्री सर्वदा पुरुष के पुरुषत्व की पुजारिन ही है साथ ही उसके धन और वैभव की भी।

नीरज ने कहा पर मुझमें तो इन दोनों का अभाव है" कहकर साहब मुस्कुरा उठे।

"कौन कहता है। अभी तक इसे व्यवहार में लाने की कदाचित् आपको आवश्यकता ही न पड़ी हो। पुरुष को बहुधा अपने भीतर छिपी हुई शक्तियों का ज्ञान नहीं होता और जब उसे इसका ज्ञान हो जाता है तब वह स्वयं ईश्वर तुल्य हो जाता है। यही ईश्वर और पुरुष में भेद है "सुनना न था कि साहब ने अपने को एक बार टटोला फिर नीरजा की ओर देख कर मुस्कुरा दिया। इस बार जैसे उनका सोया हुआ यौवन जाग उठा हो। अब तक वे स्त्री समाज से बहुत दूर रहते आये थे पर आज वह दूरी उन्हें स्वयं खलने लगी। वे उस समय लज्जा और संकोच के आवरण में इस तरह ढक दिये गये कि बोलने का प्रयास करके भी कुछ न बोल सके। उनके जबान पर जैसे ताला मार गया। नीरजा उनकी इस भयानक परिस्थिति को समझ रही थी। वह हँसती हुई कुर्सी से उठ पड़ी और साहब का एक हाथ पकड़ कर स्वयं चारपाई पर बैठ गई। साहब किंकर्तव्य विमूढ़ से उसके साथ ही चारपाई पर बैठ गये। उस समय उनकी अजीब हालत हो रही थी। उनका सारा शरीर काँप रहा था। वे उठना चाहते थे पर उठ न सकते थे और मूकवत् एकटक नीरजा की ओर देख रहे थे। नीरजा उनके हाथों को अपने कोमल हाथों में लेती हुई बोली "संकोच, भय और लज्जा पुरुषत्व के झिलमिल पर्दे हैं। उसे अब आपको उतार फेंकना चाहिए। स्त्री और पुरुष नियति के आवश्यक अंग हैं। दोनों को एक साथ रहने के लिए नियति ने निर्माण किया है, और इस संसार में यौवन, जीवन का सुन्दर और उन्मुक्त प्रवाह है जो

शैलजा की भाँति पर्वत की उत्तुंग शिखरों से छूटकर समतल की ओर उतरना चाहता है जिसके प्रबल वेग की रोक सकना दोनों के सामर्थ्य के बाहर की बात होती है जिसका लक्ष्य होता है अराजकता का सृजन। इसलिए यौवन एक अराजकता है। जैसे अराजकता में भावी परिवर्तन की ध्वनि झंकृत होती है उसी प्रकार इस यौवन की मादकता में भी···। फिर यौवन स्वयं भोग्य है जो बिना भोग के उस फल की भाँति व्यर्थ बन जाता है तो पक जाने पर भी किसी कारण वश उसी वृक्ष में ही लटका रहता है और जब गिरता भी है तो निरर्थक बन कर, व्यर्थ हो कर "कहते कहते नीरजा ने साहब के हाथों को धीरे से दबा दिया। साहब का रोम रोम प्रकंपित हो उठा। वे अपने को संभाल न सके। पागल की भाँति उन्मत्त हो नीरजा को खींचकर अपनी दोनों भुजाओं में जोर से कस लिया। नीरजा बेसुध सी उनकी गोदी में लुढ़क गई। नीरजा के होठों से अपना होठ सटाते हुए साहब ने पूछा नीरजे! तो यौवन भोग्य है, एक मादकता है और तुम·····। उस समय नीरजा आँखों में मुस्कुरा रही थी।

बारहवाँ

निर्मल तब तक वहाँ पड़ा रहा जब तक उमा तथा उसके बालबच्चों का स्वास्थ्य पूर्ववत् नहीं हो गया। इस प्रकार वहाँ इतने दिन तक रुके रहने की सूचना भी निर्मल ने सेठ जी को दे दी। इन दिनों निर्मल को कोई कार्य तो था नहीं अतः वह घर में ही दिन रात पड़ा रहता था। पर इस तरह की बेकारी से निर्मल घबड़ा उठा। एक दिन वह योंही

मकान के बाहर उदास चित्त खड़ा था कि पास के मकान से दो युवक हँसते हुए बाहर निकल आये। निर्मल का उनसे कभी का परिचय तो था नहीं पर उनमें से एक ने निर्मल का परिचय पूछा। कुछ और बातें होने के बाद युवकों ने एकाध घण्टे साथ में बैठ कर शतरञ्ज खेलने के लिए भी निर्मल को आमंत्रित किया। निर्मल का दिन भी बेकारी में ही कटता था इसलिए उसने भी इसके लिए अपनी स्वीकारोक्ति दे दी। फिर उसी दिन से संध्या और प्रातः एकाध घण्टा उसका शतरञ्ज खेलने में समय व्यतीत होने लगा और उनसे घनिष्टता भी कुछ बढ़ने लगी। इस घनिष्टता का चाहे जो भी परिणाम हुआ पर एक बात जो सबसे बढ़कर हुई वह यह कि निर्मल का विद्यार्थी जीवन पुनः जागरुक हो उठा इसलिए कि ने दोनों ही युवक बी० ए० फाइनल के विद्यार्थी थे। उसकी पुनः पढ़ाई प्रारम्भ कर देने की भावना तीव्रतर हो उठी। बी० एस० सी० की फाइनल परीक्षा वह कतिपय आर्थिक संकटों के कारण न दे पाया था। इसलिए कि परिवार के भरण-पोषण का भार जो उस समय उसके सर आ पड़ा था। इस तरह स्थिति विशेष से लाचार होकर ही उसने एक लिपिक के पद को स्वीकार किया था। पढ़ने में वह अपने दर्जे का एक अच्छा विद्यार्थी था इसीलिए उसकी फीस सदैव माफ रहती थी। जब उसने बी० एस० सी० क्लास में प्रवेश किया तो उस कालिज के प्रिंसपल (प्रधानाध्यापक) की कृपा से उसे एकाध ट्यूसन भी मिल गया जिसमें उसका तथा उसके बाल-बच्चों का भी गुजारा होने लगा पर जब उसके दूसरे बच्चे का जन्म हुआ तो खर्च कल्पना से अधिक बढ़ गया। ट्यूसन से काम चलता न देख उसने पढ़ाई-लिखाई बन्दर कर दिया। इसके बाद उसके जीवन में जितना उतार चढ़ाव और परिवर्तन हुआ वह गम्भीर चिन्तन का विषय था। उस दिन जब उसका मन शतरञ्ज खेलने में न लगा तो बहुत शीघ्र ही घर पर लौट आया। घर आते ही उसने उमा से शीघ्र ही घर चलने को कहा। उमा उसका क्या उत्तर देती, उसने केवल अपना सिर भर हिला दिया। किन कारणों से आज वह स्पष्ट कहने

में असमर्थ थी, वह खूब अच्छी तरह जानती थी। यद्यपि वह सारा वृत्तान्त निर्मल के शब्दों में सुन चुकी थी कि किस प्रकार सेठजी का उस पर पुत्रवत् स्नेह है पर न जाने क्यों उसका हृदय रह रह कर धड़क उठता था कदाचित् यह सोचकर कि भूत और भविष्य दोनों अदृश्य हैं, एक कल्पना है। उमा की यह मूक स्वीकारोक्ति बहुत कुछ सत्य भी थी इसलिए कि वहाँ का जाना उसके लिए नये सिरे से ससुराल का जाना था। एक जगह का दुखद जीवन अभी उसके सामने वैसे ही विकट अट्टहास कर रहा था। आगे क्या होगा, कल्पना का विषय था। पर पति पर उसकी अपार श्रद्धा थी, पति पर उसका अडिग विश्वास था कि वे जो कुछ भी करेंगे, परिणाम अच्छा ही होगा। ऐसे विपत्तिकाल में जहाँ पति ने भी उसका साथ छोड़ दिया था, एक रामायण ही उसके जीवन की चिर संगिनी रही। सीता सा त्याग और तपस्या उसका एक-मात्र आधार रहा। सती, सावित्री तथा दमयन्ती का जीवन वह पढ़ चुकी थी पर उसे इसकी कल्पना तक न थी कि उसको भी एक दिन इसी तरह कष्टों से, तूफान और विपत्तियों से लड़ना पड़ेगा पर उसकी वह कल्पना आज साकार हो उठी थी, जिसमें वह सफलता प्राप्त कर आज की भारतीय नारी के लिए एक उदाहरण बन गई थी। जो आये दिन तितली सी बन ठन पाश्चात्य सभ्यता की ओट में कर्तव्याकर्तव्य पर विचार न कर अपनी संस्कृति और सभ्यता पर ध्यान न दे, रूप के बाजार में प्रमाण पत्र लेने को आतुर रहती है। उमा वहाँ जाने में इसलिए भयभीत नहीं थी कि उसे वहाँ तकलीफ उठानी पड़ेगी बल्कि इसलिए कि उसके रहने से कदाचित् निर्मल की प्रगति में कोई नई अड़चन न फिर से उत्पन्न हो जाय। निर्मल इसको बहुत कुछ समझ भी रहा था पर इसका उसके पास कोई उत्तर न था। वह मौन था। उमा भी मौन खड़ी थी। अकस्मात् निर्मल बुदबुदा उठा "कत्तई नहीं, कत्तई नहीं, प्रिये ! विश्वास और श्रद्धा में शंका का कोई स्थान नहीं। तुम पतिव्रता हो, तुम्हारी परीक्षा ली जा चुकी है जिसमें तुम पूर्ण सफल सिद्ध हो चुकी हो। अब

आगे का पथ अकण्टक और स्वच्छ है। चलो तैयार रहो। देखो ट्रेन का समय होना ही चाहता है और उमा हँसती हुई सामान इकट्ठा करने चली गई। निर्मल सीतवा के साथ टाँगे आदि का प्रबन्ध करने चौराहे पर चला गया।

तेरहवाँ

उस दिन की घटना के बाद से ही साहब में एक बड़ा परिवर्तन आ गया। जहाँ वे ११ बजे से ५ बजे तक डट कर कार्यालय का कार्य देखते रहे। अब कुछ ही एक आवश्यक कागजातों पर हस्ताक्षर करने के बाद शेष प्रधान लिपिक के मत्थे छोड़ निकल देते। कभी प्रातः जाते तो बारह बजे दिन को लौटते और कभी दो बजे निकलते तो १ या २ बजे रात घर लौटते। काम में उनका जी नहीं लगता। कागज से भरी टोकरी देखकर जैसे उन्हें ज्वर चढ़ आता था। मासिक आय व्यय लेखा दस्तखत के बिना दो-दो दिन तक पड़ा रहता। एकाउन्ट के देर होते ही तार और टेलीग्राम की ढेरी लग जाती पर साहब के कान पर जूं भी न रेंगती। प्रधान लिपिक जब इसके लिए कहते कि बिना उनके हस्ताक्षर हुए एकाउन्ट यों ही पड़ा है तब कहते अच्छा तो लाइये। आधा एकाउन्ट पर हस्ताक्षर करते और आधे के लिए यह कहकर उठ जाते अभी यहीं हमारे टेबुल पर रहने दीजिये मैं अभी आता हूँ तो हस्ताक्षर किये देता हूँ, कहकर उठते और दिन-दिन भर गायब। उस दिन साहब की प्रतीक्षा करते-करते प्रधान लिपिक और लेखपाल को रात को ९ बज गये, जो अब

तक साहब का हस्ताक्षर करवाने के लिए प्रतीक्षा में बैठे थे। धीरे-धीरे घड़ी ने दस बजाया पर साहब का कहीं पता न था। प्रधान लिपिक तथा लेखपाल घर से १० बजे का भोजन करके निकले थे और अब रात के ६ बज गये। बिना खाये-पीये पेट और पीठ एक हो रही थी। कार्यालय के पास वैसी कोई दूकान भी नहीं थी, जहाँ से कुछ मिल जाता हो। पास में एक छोटी-सी दूकान अवश्य थी जहाँ पर गुड़ का बना सेव और पान मिल जाया करता था। प्रधान लिपिक ने रात की बढ़ती हुई इस निस्तब्धता से ऊब कर जब बरामदे में बाहर देखा तो चपरासी बैठा झेंप रहा था। उन्होंने उसे जगाया और पास वाली दूकान से कुछ जलपान ला देने का आदेश और पैसे दे अपनी कुर्सी पर पुनः आ बैठे। दूकानदार उस समय तक दूकान बन्द करके सो गया था। बहुत जगाने के बाद जब उठा भी तो कुछ सामान न रहने की लाचारी जता पुनः सोने लगा। चपरासी के बहुत हठ करने के बाद उसने दूकान से पाव भर गुड़ निकाल उसके हवाले करते हुए पुनः लम्बी तान लिया और चपरासी पाव भर गुड़ ले बड़े बाबू के सामने रख दिया। बड़े बाबू ने गुड़ देखते ही हाथ जोड़कर पहले उसे प्रणाम किया और फिर एक टुकड़ा मुख में डाल एक लोटा पानी पी कुछ देर के लिए भूख भगवान से उनपर कृपा बनाये रखने की प्रार्थना करने लगे और शेष गुड़ लेखपाल के सामने खिसका दिया। लेखपाल थे कुछ देहाती ढंग और विचार परम्परा के। दूसरे भूख उन्हें अत्यधिक सता रही थी। अतः देखते ही देखते सारा गुड़ वे चट कर गये, यह कहते हुए कि बाबूजी गुड़ देखने में ही काला और मटमैला है पर स्वाद में निहायत उम्दा। बड़े बाबू क्या कहते। उत्तर दिया "सब भूख भगवान की कृपा थी और नहीं तो ऐसे गुड़ महाराज से आज तक जीवन में कभी पाला नहीं पड़ा कहकर कुर्सी पर ही बैठे बैठे ऊंघने का प्रयत्न करने लगे। लेखपाल को भी कुछ झपकी सी आने लगी और वे दोनों पैर फैला वहीं उसी टेबुल पर रख झँपकने लगे। तब तक घड़ी ने बारह बजा दिया। चपरासी बेंच पर लेटने का प्रबन्ध कर ही रहा था कि साहब

की मोटर कम्पाउंड के भीतर आती हुई दिखलाई पड़ी। "साहब आ गये बड़े बाबू" कहकर चपरासी लपकता हुआ मोटर गैरेज की ओर बढ़ गया और बड़े बाबू तथा लेखपाल सतर्क हो कर अपनी-अपनी कुर्सी पर बैठ गये। कम्पाउन्ड के भीतर प्रवेश करते ही साहब ने देखा कि कार्यालय खुला है और चपरासी को फटकारते हुए कहा कि अभी तक कार्यालय क्यों खुला रक्खे हो ?

"हुजूर। बड़े बाबू तथा एकाउन्टेंट बाबू अभी बैठे आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

"मेरी प्रतीक्षा ! क्यों ! अच्छा ! जाकर उनसे कह दो कि मैं इस समय कार्यालय में नहीं बैठ सकता "और सीधे बँगले के भीतर घुस गये। चपरासी ने बड़े बाबू से साहब का आदेश कह दिया। सुनते ही बड़े बाबू ने अपनी छड़ी उठाई और नौ दो ग्यारह हुए। और एकाउन्टेंट भी उफ भगवान ! "धन्य है क्लर्की" कहकर उठे और बड़े बाबू के साथ हो लिए। चपरासी ने कार्यालय बन्द कर दिया।

—०—

चौदहवाँ

जब से उमा सेठ गोविन्ददास के घर आई है तब से उसके जीवन में जमीन-आसमान का अन्तर आ गया है। जहाँ उसे हर समय पेट भरने तथा महीने भर किसी तरह राशन चल जाने की चिन्ता लगी रहती थी अब अंगूर और बेदाना घर में भरा रहता था। सेठानी पीठ सहलाती

हुई पूछती "बहू कुछ तकलीफ तो नहीं" और उमा उठकर उसके चरण चूम लेती। सेठानी के आंखों से प्रसन्नता के दो बूँद आंसू छलक पड़ते। वह अपने को इस समय ऐसी बहू पाकर धन्य मानती। इसके अतिरिक्त सेठ भी दिन में कई बार आकर पूछ जाते और जाते समय सेठानी को आदेश दे जाते कि बहू को किसी बात की तकलीफ न पड़े।

निर्मल के दोनों बच्चे सेठ को दादा और सेठानी को दादी कहकर पुकारते। दादा और दादी बच्चों के मुख से सुनकर दोनों फूले न समाते। वे उन्हें उठाकर छाती से लगा लेते। उमा यह सब देख-सुनकर कभी-कभी गम्भीर मुद्रा में कुछ सोचने लगती। क्या वह कोई स्वप्न तो नहीं देख रही है या उसके जीवन में सचमुच ही परिवर्तन हुआ है। अथवा यह नियति के झंझावात का एक थपेड़ामात्र है। जैसे प्रबल झंझा के पहले जलधि की उत्ताल तरंगें स्तब्ध हो उठतीं हैं और आकाश में घोर निस्तब्धता छा जाती है, माझी अपनी नौकाओं को खींच किनारे पर बाँध मूकवत् बैठ जाता है। इसी तरह क्या इतना सुख इतना दुलार उसी झंझावात का एक उपकरण तो नहीं जिसे वह आज तक न तो कभी पायी और न कल्पना ही कर सकी थी। पर दूसरे ही क्षण जैसे कोई कह देता "तुम पगली हो, भूल करती हो। इस संसार में अपना और पराया कोई नहीं। सब अपने और सब पराये हैं। यह संसार तो एक मंजिल है चलने के लिए। चलते जाइये, बढ़ते जाइये। कहीं इसका ओर छोर नहीं। माया जादूगरनी के जाल की यही तो महत्ता है और मस्तिष्क झलता उठता। वह सोचना कुछ क्षण के लिए बन्द कर देती और कोई न कोई किताब खोलकर पढ़ने लगती। एकाध पन्ने उलटने के बाद वह पुनः चिन्तामग्न हो जाती। क्या उसके भाग्य में फिर तो कोई परिवर्तन होने वाला नहीं? यदि ऐसा सम्भव न था तो सेठ ने उन्हें (निर्मल को) कालेज में क्यों भरती करा दिया। माना कि वे अपनी इच्छा से ही पढ़ने गये। पर इतने बड़े व्यापार की देख रेख और उसकी जिम्मेदारी क्या उस पढ़ाई से कम महत्वपूर्ण थी। यद्यपि सेठ ने

उनका (निर्मल) नाम भी अपने नाम के साथ ही साथ प्रत्येक व्यापारिक कार्यों में जुड़ा दिया है पर इससे क्या ! जैसे वह जुड़ा दिया गया है वैसे कट भी तो सकता है, और तब·····। सोचते-सोचते वह कांप उठती। कदाचित् किसी भावी संकट की आशंका से। तब तक सेठानी आकर उसकी पीठ को सहला देतीं। बहू कोई तकलीफ तो नहीं और फिर वह अपने को भूल जाती तथा सेठानी से घुल-मिलकर बातें करने लगती।

यों घर पर अनेकों परिचारिकाएं लगी हुई थीं पर उमा को दिन भर निठल्ले बैठे रहना अच्छा न लगता था। वह अपने मायके में ही कसीदे बूटे काढ़ना तथा बच्चों की कमीज, कुरते सी लेना आदि बहुत से कामों को अच्छी तरह सीख चुकी थी। अतः वह सेठ और सेठानी के लिए जाड़े में "ऊनी स्वेटर, तकिये की खोली पर कसीदे बूटे का काम कर दिया करती। इसके अतिरिक्त जो भी समय बचता निर्मल के कमरे को सजाने और सभी वस्तुओं और पुस्तकों को यथा स्थान रखने में व्यतीत करती। निर्मल जब कालेज से आता वह उसके आने के पहले ही कमरे में उपस्थित रहती। आने पर वह उसके हाथ से पुस्तक लेकर यथास्थान रख देती और जलपान का प्रबन्ध कर, बदलने के लिए दूसरे कपड़े लाकर रख देती। निर्मल को अपने इस परिवर्तन पर न तो कोई प्रसन्नता होती और न तो कोई आश्चर्य ही। पर वह रह रह कर बीच में उमा के चेहरे को देख लेता और गम्भीर शब्दों में कहता "प्रिये आज के ये सभी वैभव और शान शौकत तुम्हारी तपस्या और पातिव्रत के प्रभाव से ही प्राप्त हुए हैं और उमा हँस कर उत्तर देती "नहीं नहीं, मेरी नहीं, उस गुरुदेव की कृपा से जिसने आत्म हत्या करने से बचाया तथा इन छोटे-छोटे दुधमुँहे बच्चों को पेट भर भोजन दिया "सुनकर निर्मल के आँखों में आँसू छलछला आता और वह घण्टों गुरुदेव की प्रतिमा के सम्मुख खड़ा हो प्रेमाश्रु बहाया करता और उमा उसके चरण को दबाती जाती

\+ \+ \+ \+

बी० एस० सी० का परीक्षा फल निकला निर्मल उस साल की परीक्षा में यूनिवर्सीटी में सर्वप्रथम आया। सेठ की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। संगी साथियों ने बधाई के तार भेजे। किसी ने मिठाई और किसी ने गहरी दावत की माँग की। स्वयं उस कालेज के प्रिंसपल ने निर्मल तथा सेठ को एक तार भेज कर बधाई दिया। निर्मल का उत्साह अब पहले से भी अधिक बढ़ गया। अब वह अधिक से अधिक समय पठन-पाठन में व्यतीत करने लगा। पत्र पत्रिकाओं का तो जैसे उसके यहाँ ढेर लगा रहता। उच्च कोटि के लेखकों और कवियों की सभी अच्छी पुस्तकें उसने खरीद कर रख लिया था। किसी दावत या पार्टी में सम्मिलित होना वह बहुत कुछ कम कर दिया था। इधर-उधर घूमना-फिरना और सैर सपाटे भी सब कम हो गये थे। गहन अध्ययन ही उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य रह गया था। उसकी अध्ययनशीलता देख लोगों ने उसे भारतीय प्रशासन सेवा में बैठने की सलाह दी। परीक्षा सितम्बर के पहले सप्ताह में होनी थी और कालेज जुलाई में ही खुल जाता था। अतः तबतक निर्मल को लोगों ने एम० एस० सी० में नाम लिखाने की राय दी। निर्मल अब एम० एस० सी० के साथ ही साथ आई० ए० एस० की तैयारी में भी जुट गया।

\+ \+ \+ \+

आई० ए० एस० का परीक्षा फल निकला निर्मल उस परीक्षा में भी सर्वप्रथम रहा। इस तरह निर्मल के मस्तिष्क और गहन अध्ययन दोनों की परीक्षा हो गई। एक दिन वह एक क्लर्क की दशा में था जहाँ से निकम्मा बनाकर निकाला गया था।" सोचते ही उसका मस्तिष्क खिन्न हो उठा, हृदय रो दिया। यह सोच कर कि आज भी भारत के बहुत से अभागे इसी तरह की परिस्थिति का शिकार बने दयनीय जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य किये जा रहे हैं जिन्हें आजीवन रोटी और पेट का प्रश्न सताये रहता है। उसने उस दिन से इस बात का व्रत ले लिया कि वह

मध्यम वर्ग के लोगों के बीच इस बात की छानबीन करेगा और एक ऐसी क्रान्ति पैदा करेगा जिससे मेधावी जनों को अलग किया जा सके। उनको ऐसी परिस्थिति में कुछ दिन तक रखा जाय जिससे उन्हें बाह्य संसार की कोई भी चिन्ता न सताये। उसके विकसित मस्तिष्क को और भी उर्वरित बनाने का सफल प्रयास किया जाय। जिससे न केवल उनका ही सुधार हो बल्कि आनेवाली भारतीय पीढ़ी भी उर्वरित और विकसित मस्तिष्क लेकर पैदा होगी। आज दिनों जो मुट्ठी भर अमीरों और साहबों के लड़के उच्च पदों पर पहुच रहे हैं जो प्रथमावस्था की पढ़ाई लिखाई में अकुशाग्र बुद्धि, भद्दा शरीर, विलासी, और अहंमय प्रतीत होने पर भी आगे चल कर पढ़ने लिखने का यथेष्ट साधन पाकर बहुधा उच्च पदों पर मनोनीत हो जाते हैं, जिनमें गरीबों के प्रति कोई सद्भावना नहीं रहती, जो सदा उन्हें गिरी निगाहों से देखते हैं, उनके प्रति घृणा रखते हैं, उनसे मिलने की कौन कहे, फाटक तक फटकने भी नहीं देते। उनके दुखों को देख तथा उनके बहते हुए आंशुओं को देख जिन्हें तरस नहीं आता, कानों पर जूं तक नहीं रेंगती, जो अपने को ईश्वर या देवता समझते हुए कार में बैठे, प्रेयसी के मन्द मन्द मुसकानों का रस पीते गरीब जनता की छाती पर चढ़े उनका रक्त पान करते अब भी उसी नौकरशाही पथ के अनुगामी बने हुए हैं। सन् १९४२ की सफल क्रान्ति हुई थी। जिसने फिरङ्गियों को भारत छोड़ देने के लिए बाध्य किया था। आज इनके लिए भी सब को मिलकर एक क्रान्ति करना है। उन्हें अपने को देवता नहीं, ईश्वर नहीं, एक भारतीय पूर्ण भारतीय समझने के लिए पाठ देना है। सोचते-सोचते निर्मल एक कुर्सी खींचकर खिन्नावस्था में बैठ गया। तब तक डाकिया ने एक पत्र लाकर उसके टेबुल पर रख दिया जो भारत सरकार की ओर से उसे ट्रेनिंग में जाने के लिए दिल्ली से भेजा गया था।

—※—

पन्द्रहवाँ

कार्यालय अब १०½ बजे से ४½ बजे तक का हो गया। साहब ने प्रधान लिपिक को बुलाकर यह आदेश दे दिया कि ४½ बजे के बाद कोई भी लिपिक कार्यालय में बैठा दिखाई न पड़े। साथ ही कुछ एक चपरासी को छोड़ अन्य सभी को कार्यालय के अहाते के भीतर रहने की मनाही कर दी गयी। साहब भी अब पहले की भाँति १०½ से ४½ तक डटकर कार्यालय का कार्य सुचारु रूप से करने लगे। सब पिछड़ा हुआ कार्य पुनः सामान्य स्तर पर आ गया। लिपिक गणों को भी अब कोई कष्ट नहीं रहा। सब समय से आते और समय पर अपना कार्य समाप्त कर चले जाते। इसके अतिरिक्त साहब का शहर आना जाना भी बहुत कुछ कम हो गया। इसलिए कि जहाँ वे पहले नीरजा के यहाँ स्वयं पहुँचते थे अब नीरजा उनके बंगले पर नौ या दस बजे तक, स्वयं आ जाती।

नित्य की भाँति नीरजा उस दिन भी रिक्से से उतर कर सीधे साहब के कमरे में चली गयी। देखा तो साहब स्वयं अपने हाथों ही शराब की बोतलें और प्याला आदि ठीक कर रहे हैं। चपरासी द्वार पर खड़ा था जो नीरजा को देखते ही खिसक गया। यों मदिरा पीने के अभ्यस्त न तो साहब ही थे और न तो नीरजा ही। पर यह सब कुछ अनजान और परिस्थिति विशेष से हो गया, और धीरे-धीरे यह साहब की आदत के रूप में परिवर्तित हो गया। अब साहब के जीवन में मदिरा एक आवश्यक अंग बन गई और उससे भी आवश्यक नीरजा की उपस्थिति। साहब को इस प्रकार कार्य में जुटे देख नीरजा कुछ देर तक खड़ी-खड़ी वहीं मुस्कुराती

रही फिर हँसते हुए कहा "कहिए मैं भी कुछ सहायता कर दूँ" और जोर से खिलखिला पड़ी। उसकी इस खिलखिलाहट पर साहब मुग्ध हो उठे। वे उसके कोमल हाथों को पकड़ कर बैठाते हुए प्याला भरने लगे और नीरजा के होंठो पर लगाते हुए बोले "प्रिये यौवन एक मस्ती है और मदिरा उसका उपकरण। इसलिए धीरे-धीरे यह अब मेरी आदत के रूप में बदल गई है, और तुम जानती ही हो कि आदत क्या बला होती है। "पूर्व जन्म के अच्छे या बुरे संचित कर्मों का फल वर्तमान के अवगुण्ठन में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में, जान या अनजान में, संस्कार के रूप में धीरे-धीरे पलने लगता है और यही संस्कार एक दिन आदत में बदल जाता है "कहकर साहब ने दूसरा प्याला भर दिया।"

"क्या अब आप पूर्व जन्म पर विश्वास करने लगे हैं? प्याला होठ से लगाते हुए नीरजा ने पूछा?

"पहले तो नहीं पर अब जैसे यह विश्वास स्वतः मेरे हृदय में घर सा करता जा रहा है जो तुम्हारे सम्बन्ध से और भी बढ़ने लगा है। इसके अतिरिक्त कभी-कभी तो मुझे ऐसा आभास होता है जैसे हमारा और तुम्हारा सम्बन्ध कई जन्म जन्मान्तर से बनता चला आ रहा हो" कहकर साहब ने दूसरा प्याला भी समाप्त कर दिया और नीरजा की आँखों में आखें गड़ाते हुए कहा यौवन जीवन का सबसे विकसित काल है जिसके चढ़ाव में एक नये संसार का निर्माण होता है जिसमें अतृप्तिजनित मादकता का पागलपन झलकता है और उस पागलपन में संहार नहीं, सृजन होता है जिसमें स्त्री और पुरुष नाटकीय ढंग से मदहोशी का प्याला पिये रंग मच पर चढ़कर परस्पर नृत्य करते हैं उस समय पुरुष उछाल दिया जाता है, स्त्री आकर्षण करती है और मदिरा उस उछाल और आकर्षण के बीच की दूरी को कम करने का उपकरण "कहकर साहब ने नीरजा के कोमल हाथों को अपने हाथों में ले लिया और नीरजा ने उनके गले में अपनी कोमल भुजाएँ डालते हुए कहा "हाँ यह ठीक ही है पर मेरी समझ से यौवन एक

जागृत प्रयोगशाला है जिसमें वासनाजनित खुमार का आविष्कार होता है।"

"और तुम उस आविष्कार का एक अनुपम उपकरण, कहते कहते साहब ने उसे भुजाओं में भर लिया। फिर तुरत ही बाहुपाश को ढीला करते हुए कहा, क्या हमारे तुम्हारे इस मिलन को दुनिया का सबसे बढ़िया निर्माण नहीं कह सकते।"

"नहीं इसे वासनाजनित पागलपन कहते हैं जिसे समाज हेय की दृष्टि से देखता है।"

"मुझे समाज और उसके हेयपन की चिन्ता नहीं।"

"होना चाहिये और अवश्य ! इसलिए कि स्त्री और पुरुष स्वयं समाज तथा उसके दृढ़ नियम हैं जिसके बिगड़ने पर समाज में उच्छृङ्खलता छा जाती है और जब समाज उच्छृङ्खल हो जाता है तो उस समाज का भी पतन हो जाता है जिसके साथ उसका और उसके महान् देश दोनों का पतन प्रारम्भ हो जाता है। इसीलिए इस पतन को रोकने के लिए समाज ने विवाह ऐसे पवित्र और महान् बन्धन का निर्माण किया।" कहकर नीरजा गम्भीर हो गई।

"तो क्या विवाह प्रेम-पाश से भी महान् है।"

"पर इसे प्रेम तो कहते नहीं। यह तो वासना की तृप्ति या अतृप्ति का उपकरण मात्र है। प्रेम तो इससे परे की वस्तु है।"

"मैं मानता हूँ कि इसे प्रेम नहीं कहते पर वैवाहिक जीवन का प्रथम पक्ष भी तो इसी तरह अज्ञात अंधकार की भाँति गतिमान रहता है जिसमें वासना ही प्रधान रहती है। भले ही वह आगे चलकर शुद्ध प्रेम का रूप ग्रहण कर ले। पर यह भी तो कोई निश्चय नहीं कि वह शतप्रतिशत सफल ही हो इसलिए कि आज का विकसित समाज तलाक की ओर बड़ी तीव्रता से बढ़ता हुआ प्रतीत हो रहा है और यह तलाक एकाङ्गी नहीं,

दोनों ओर से होता है। इसलिए मैं विवाह के पक्ष में नहीं।" कहकर साहब ने नीरजा पर एक विजित दृष्टि डाली।

"पर वंश परम्परा की दृष्टि से तो यह अपेक्षित है।" कहकर नीरजा मौन हो गई।

"और जो निःसंतान ही मर जाते हैं।" कहकर साहब ने ठहाका मारा। तब तक घड़ी ने टन टन टन चार बजा दिया। नीरजा बाहु-पाश से अलग हो गई। साहब ने ड्राइवर को बुलाया और नित्य की भाँति नीरजा कार में बैठकर चली गयी। साहब विश्राम गृह में आकर विश्राम करने लगे।

—※—

सोलहवाँ

निर्मल अपने प्रशिक्षण काल में इस बात के लिए प्रयत्नशील रहा कि मध्यम वर्ग के कर्मचारियों के प्रति प्रत्येक उच्च अधिकारीगण सद्भावना पूर्ण व्यवहार रक्खें। वर्ग विशेष के प्रति बढ़ती हुई उनकी इस सद्भावना-मयी स्पृहा ने सचिवालय के प्रत्येक जनों को उसकी ओर आकर्षित कर लिया। उसके निवासस्थान पर सदा भीड़ सी लगी रहती और तद्विषयक प्रश्न को लेकर कभी कभी विचार विनिमय के रूप में कर्मचारियों की एक सभा भी बुला ली जाती जिसमें सबके सब अपने ऊपर होने वाले प्रत्येक अत्याचारों को कहने के लिये स्वतन्त्र होते।

बाद में निर्मल उन अधिकारी गणों के इस प्रकार कार्य करने के कारणों पर प्रकाश भी डालता और कहता कि अभी तक उन अधिकारी

गणों में सच्ची राष्ट्रीयता का उदय नहीं हुआ है। वे जिस नौकरशाही में पुष्पित और पल्लवित हुए हैं उसकी वू ज्यों की त्यों उनमें बनी हुई है। वे अब भी जनता के सेवक न होकर शासक ही बने रहने की भावना से ओत प्रोत हैं। वे भारतीय संस्कृति में विश्वास नहीं रखते! पाश्चात्य सभ्यता की बढ़ी हुई भौतिकता में वे बुरी तरह फँस चुके हैं। आध्यात्मिकता में उनकी कोई स्पृहा नहीं, कोई विश्वास नहीं। बापू के त्याग, तपस्या और आध्यात्मिकता मिश्रित नवीन भौतिकता में उनकी कोई आस्था नहीं। अर्थ ही उनके लिए सब कुछ है जिसके लिए कर्तव्याकर्तव्य का ध्यान किये बिना वे हर समय बेसुरा राग अलापते रहते हैं। जब तक उनमें सच्ची राष्ट्रीयता का उदय नहीं होता, संविधान की रूपरेखा केवल कल्पना जनित ही रह जायगी, और ये अधिकारी गण सदा बाधक के रूप में सामने आते रहेंगे।

आज हमारी सरकार योजनाओं की पूर्ति में जिस तरह जुटी हुई है उस तरह वह इन अधिकारियों में फैले हुए दुर्व्यसनों की ओर नहीं। इसका फल यह हो रहा है कि कार्य विशेष के लिए निर्धारित रकम आधी तो बड़े बड़े अधिकारियों के पेटों में चली जाती है और चौथाई अन्य कर्मचारीगणों के। एक चौथाई ही रुपया असली कार्य में लग पाता है, इसकी भी कोई पुष्टी नहीं।

सभी अपना अपना पेट भरने के लिए प्रयत्नशील दिखलाई पड़ते हैं। प्रत्येक विभाग का बजट सितम्बर तक ही बन जाता है। कार्य का अनुमोदन तथा उसकी रूपरेखा सब उसी समय तैयार हो जाती है। पर खर्च के लिए रुपया एक साथ ही मार्च में मिलता है जिसे उसी महीने में खर्च भी कर देना अनिवार्य होता है और वे अधिकारीगण उस रुपये को लेकर किस बुरी तरह पानी की भाँति बहाते हैं कि हृदय रो उठता है। जहाँ सरकार योजना की पूर्ति के लिए विदेशों से ऋण ले रही है गरीब जनता को अधिक से अधिक टैक्स देकर योजना को सफल बनाने के लिए प्रोत्साहित कर रही है। वहाँ ये अधिकारीगण जनता की गाढ़ी कमाई से

एकत्रित की हुई रकम का इस प्रकार दुरुप्रयोग कर रहे हैं, तथा अपनी विलासिता को बनाये रखने के लिए जायज या नजायज सभी कार्य करने के लिए तैयार रहते हैं।

वे सोचते हैं कि आज की सरकार तो 'कागजी सरकार' है। बस कागज का पेट किसी तरह भर जाना चाहिए, चाहे जनता का पेट भरे या न भरे। यदि अधिकारी गणों में पर्याप्त सुधार न हुआ तो बापू की इच्छा केवल इच्छा ही रह जायगी और भारतीय सेनानियों द्वारा नव निर्मित संविधान एक कहानी मात्र। कहते कहते निर्मल के आँखों में आँसू छलछला आता।

उसकी इस राष्ट्रीयता को देख जो भारतीय संस्कृति से ओत-प्रोत थी उसके प्रति सबकी प्रगाढ़ निष्ठा और भी बढ़ जाती। सब उसे मानव नहीं देवता समझने लगते। सबका उसपर इस बात का विश्वास हो चला था कि यह निश्चय ही अधिकारीगणों के लिए एक क्रान्तिकारी उदाहरण उपस्थित करेगा जिससे वर्ग विशेष का लाभ तो होगा ही साथ ही सबमें सच्ची राष्ट्रीयता का उदय भी होगा और भारतीय संस्कृति के महत्व को लोग समझने लगेंगे। तब बापू की रामराज्य की कल्पना साकार होगी। उसकी बढ़ती हुई ख्याति राष्ट्रपति तथा प्रधान मंत्री के कानों तक भी पहुँची। वे उसके उस स्तुत्य प्रयत्न को देख अत्यन्त प्रभावित हुए।

अब तक निर्मल का प्रशिक्षण काल समाप्त हो चुका था। उसने जिस लगन, उत्साह और कर्मठता से कार्य किया उसका प्रभाव उन प्रत्येक प्रशिक्षित स्नातकों और साथ ही प्रत्येक कर्मचारियों पर पड़े बिना न रहा। उसकी विलक्षण बुद्धि तथा कार्य कुशलता को देख स्वयं राष्ट्रपति ने उसे स्वर्णपदक प्रदान किया तथा हाईकोर्ट में न्यायाधीश के पद पर मनोनीत भी कर दिया। यद्यपि यह कार्य अव्यावहारिक तथा संविधान के सर्वथा प्रतिकूल था।

न्यायशीश के पद पर मनोनीत होने के बाद ही निर्मल के उस क्रान्ति-

कारी विचार ने और भी उग्र रूप धारण कर लिया। सरकारी कार्य करने के बाद जो भी समय बचता वह पूजा-पाठ तथा अपने उक्त राष्ट्रीय मत के प्रचार में लगाता। फैसला भी इतने सुन्दर ढंग का करता कि दूध का दूध और पानी का पानी अलग कर देता। बैरिस्टरों तथा वकीलों में भी उसकी सर्वप्रियता बढ़ने लगी। सब उसका गुणगान करने लगे।

यों तो हाइकार्ट के न्यायाधीशों के रहने के लिए सरकारी बँगले मिले हुए थे जो सबके सब सुबास रोड पर बने थे। पर निर्मल ने अपना एक छोटा सा बंगला जवाहर रोड पर ले रक्खा था। वह सड़क टेढ़ी मेढ़ी घुमावदार नालों को पार करती हुई शहर से दूर घने जंगल की ओर चली गयी थी। उस सड़क पर दोनों ओर घने छायादार वृक्ष लगे थे। जो ऊँचाई पर जाकर एक हो गये थे। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था जैसे कोई चंदोआ तान गया हो। सड़क अत्यन्त साफ सुथरी थी। मोटर का आवागमन उस पर बहुत कम रहता था। बहुधा शहर के बड़े-बड़े लोग उस सड़क पर प्रातः काल की सुखद, शीतल तथा मन्द सुगन्ध मलयानिल का आनन्द लेने निकलते थे।

निर्मल के बँगले से सटा हुआ एक बड़ा बेढंगा टेढ़ा-मेढ़ा नाला बहता था। उस नाले पर सड़क के ऊपर जो एक छोटी-सी पुलिया बनी थी उसकी बनावट ऐसी विचित्र थी कि जरा भी असावधानी बरतने में मोटर वालों के लिए संकट उत्पन्न हो जाता था। इस तरह की कई ऐसी घटनाएँ भी वहाँ हो गई थीं जिससे डरकर लोग कार, ट्रक या लारी उस सड़क से लेकर नहीं चलते थे।

निर्मल का यह नियम था कि वह प्रातः ३ बजे ही उठ जाता। शौचादि से निवृत्त हो ठीक चार बजे टहलने के लिए उस सड़क पर निकल पड़ता और पांच मील तक बराबर चलता चला जाता। कभी दौड़ता, कभी दुलकी चलता और कभी धीमी गति से प्रातःकालीन मलयानिल का पान करता जाता। इस प्रभात-पर्यटन ने उसके स्वास्थ्य

में एक बड़ा परिवर्तन ला दिया था। जिस तीव्रता के साथ उसका मानसिक विकास हुआ था उसी तीव्रता के साथ उसका शारीरिक विकास भी। छः फीट का ऊँचा छरहरा बदन, गोल पर कुछ लम्बाई लिए भरा हुआ चेहरा, ऊँचा मस्तक, चौड़ा और उभरा वक्षस्थल। लम्बी सारिका सरीखी नुकीली नासिका, पतले और लाल होठ। मांसपेशियों का उभार ऐसा कि कुरते और कमीज के ऊपर से भी स्पष्ट मालूम पड़ जाता था। उसकी ऐसी आकृति किसी भी तरुणी के लिए आकर्षण का कारण बन रही थी।

उसके बँगले पर प्रत्येक बृहस्पतिवार को सत्संग होता जिसमें भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिकता पर प्रकाश डाला जाता। रामायण और गीता की महत्ता पर प्रवचन होता। साथ ही सच्ची राष्ट्रीयता की रूपरेखा भी सबको बतलायी जाती। बापू के रामराज्य की कल्पना तथा नव-निर्मित संविधान को सफल बनाने का सबसे अनुरोध किया जाता। इस कार्य के लिए एक कमेटी बनाई गई थी जिसमें शहर के बड़े-बड़े विद्वान तथा त्यागी उत्साही नवयुवकों का समुदाय भी था। उस कमेटी के प्रधान स्वयं निर्मल के गुरुदेव बनाये गये थे जो आये दिन उसी बँगले पर रह कर शहर के लोगों में इस बात का प्रचार कर रहे थे।

निर्मल के इस कार्य ने उसकी ख्याति दूर-दूर तक फैला दी थी। अधिकारी गणों के लिए वह उदाहरण था और निम्न वेतन भोगियों के लिए देवता। समाचारपत्रों में लोग बहुधा पढ़ा करते "निर्मल की भारतीय संस्कृति में ओत-प्रोत सच्ची राष्ट्रीयता विश्व के लिए एक नई देन होगी।"

———

सतरहवाँ

नीरजा और साहब का प्रेम उत्तरोत्तर घनिष्ठ होता गया। नीरजा जिस कार्य-विशेष के लिए नियुक्त की गयी थी उसमें पूर्ण सफल सिद्ध हुई। साहब उसके रूप और यौवन पर अपने को न्योछावर कर दिये। पहले तो वह साहब की प्रत्येक गतिविधियों की सूचना उन विरोधी कर्मचारियों और ठेकेदारों को देती रही पर अब कुछ भी बताने में आना-कानी करती तथा उनसे मिलना जुलना भी कम कर दिया। इस प्रकार अपना फेंका हुआ पैना और तीखा शस्त्र विफल होते देख उन विरोधियों ने फिर दूसरी चाल चलना प्रारम्भ किया। वे साहब और नीरजा दोनों को फँसाने की ताक में लग गये। उसमें से कुछ ने क्षेत्र विशेष के राजनीतिक नेताओं से मेल मिलाप बढ़ाना प्रारम्भ कर दिया और साहब के अत्याचार तथा व्यभिचार की प्रत्येक सूचना उनके कानों में डालने लगे। फल यह हुआ कि सचिवालय से बार-बार प्रश्न पूछे जाने लगे, साथ ही कुछ गुप्तचर भी इसके लिए नियुक्त किये गये तथा जिलाधीश भी गुप्त रूप से पूर्ण निगरानी रखने के लिए आदेशित कर दिये गये। वह नियुक्त गुप्तचर विभाग, उन विरोधी कर्मचारियों तथा ठेकेदारों से मिलकर साहब की प्रत्येक गतिविधियों की सूचना पूर्णतया पाने लगा।

साहब का व्यभिचार अब चरम सीमा पर पहुँच गया था। वे नीरजा के हाथों के खिलौना बन चुके थे। यद्यपि नीरजा ने उन विरोधी कर्मचारियों तथा ठेकेदारों का नाम साहब से नहीं बतलाया था फिर भी

साहब उनकी प्रत्येक गतिविधियों से सब कुछ जान गये थे। वे उनके विरुद्ध आवश्यक कार्यवाही करना चाहते थे पर कतिपय कारणों से विवश हो गये थे। उन्हें इस बात की भी सूचना मिल चुकी थी कि सचिवालय से इस प्रकार प्रश्नों की झड़ी लगने के एक मात्र कारण वे ही लोग हैं। जिससे साहब का दम्भ और भी जागरुक हो गया। एक दिन जब वे मण्डलाधीशों तथा अन्य कर्मचारियों के बीच "मीटिंग" में बैठे थे तो गरजकर सबको सम्बोधित करते हुए कहा "सबको यह अच्छी तरह मालूम हो जाना चाहिए कि मैं एक गजटेड अफसर हूँ। हमारा कोई कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। ये नेता जो कल डण्डे खाते रहे, भेड़ बकरियों की तरह जेलों में ठूँस दिये जाते रहे, इन्हें क्या पता कि शासन कैसे किया जाता है। इनकी योग्यता भी किसी से छिपी नहीं। बस डण्डे और जेल ये ही दो इनकी योग्यता के सबसे प्रबल प्रमाण हैं। जो जितने अधिक डण्डे खाया और जितनी अधिक बार जेल गया वह उतना ही योग्य माना गया जिसमें दो वर्ग के लोग आते हैं। पहले तो वे जो घर के आवारा थे, जिन्हें खाने पीने का घर पर कोई ठिकाना न था, सोचे कि चलो ऐसे ही कुछ दिन जनता को बहका कर समय कट जाय तो अच्छा है। जिसके लिये उन्होंने अपने में भाषण देने की क्षमताउत्पन्न करली। भाषण देने के उस अभ्यास से और चमक गयी उनकी नेतागिरी।

दूसरे वे वकील गण आते हैं जिनकी वकालत तो कुछ चलती न थी, दिन भर तख्ते पर बैठे मक्खी मारा करते थे। यदि किसी ने कृपा करके दो एक बीड़ा पान खिला दिया तो थोड़ा मुख लाल कर लिया और फिर शाम को हवा फांकते घर चले आये। घर पहुँचते ही पत्नी बिगड़ी, पिता माता बिगड़े। नित्य के इस व्यापार से जी ऊब गया। पेट भरने का और कोई साधन न देख बस कांग्रेस में नाम लिखा लिया और दो एक बार जेल जाकर देश भक्ति का प्रमाण पत्र ले लिया।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आज वे ही एम० एल० ए०तथा मन्त्री बीस बीस हजार की मोटरों पर चढ़े लखनऊ दिल्ली के शहरों का आनन्द लूट

रहे हैं तथा अपने को जनता का, देश का एक मात्र रक्षक बनने का ढिंढोरा पीटते हैं। जनता और कर्मचारियों में आये दिन जो उच्छृङ्खलता और अनुशासनहीनता फैलती हुई दृष्टिगोचर हो रही है तथा उत्तरोत्तर फैलती जा रही है उसका बहुत कुछ श्रेय इन्हीं नेता गणों पर है।

मुझे यह भी अच्छी तरह मालूम है कि कौन कौन से लोग हमारे विरुद्ध इन नेताओं से मिलकर एक षडयन्त्र रच रहे हैं वे अब भी सँभल जाँय और रास्ता छोड़ दें अन्यथा उनकी इस एक मात्र गलती से उनके साथ उनके परिवारवालों को भी फांकाकशी करनी पड़ेगी। एक बार ऐसे लोगों की चरित्र-पंजिका चौपट की जा चुकी है, दूसरी बार फिर ऐसी कलम उठाने की नौबत न आये इसलिए सबको पहले ही आगाह किये देता हूँ" कह कर साहब भूखे सिंह की भाँति उन बैठे हुए मण्डलाधीशादि पर बरसने लगे। सब चुपचाप विष घूँट की भाँति साहब की उस भर्त्सना को पीते रहे। इस समय तक रात के आठ बज चुके थे। दूर से आये हुए कुछ लोग तो इतने अधिक थक गये थे कि इतनी करारी फटकार के अनन्तर भी उसी अपनी कुर्सी पर बैठे बैठे ऊँघने लगे थे। साहब ने अनुभव किया और मीटिंग को समाप्त करते हुए सबको पुनः एक-एक फटकार देकर कोठी के भीतर चले गये। मण्डलाधीशादि अपने विश्राम गृह को।

नीरजा अन्य दिनों की भाँति साहब के पास पहुँच गयी शराब की बोतलें उतरीं और दोनों छक-छक कर पीने लगे। "यौवन और मस्ती, शराब और साकी, निशा और अंधकार सब एक दूसरे के पूरक हैं" कहकर साहब ने नीरजा को बाहु-पाश में कस लिया आज केलिगृह में दोनों इतने आनन्द विभोर थे कि चार कब बजा, घड़ी में लगे हुए एलार्म से ही पता चला। लगे हुये उस एलार्म को सुनकर जैसे दोनों चौंक पड़े। साहब ने बाहु-पाश ढीला कर दिया और नीरजा झट से अलग हो गई। तब तक ड्राइवर ने हार्न दिया और कार नीरजा को लेकर सड़क पर दौड़ने लगी। कार दौड़ती हुई जब उसी नाले के ऊपर पहुँची तो एकाएक बन्द हो गयी। ड्राइवर ने कितना ही जोर मारा पर वह टस से मस न हुई। चार का

समय, पास में कोई दूकान भी नहीं। वह क्या करें लाचार था। कोई सवारी भी नहीं मिल सकती थी जिस पर नीरजा को चढ़ाकर उसे उसके घर को भेज पाता। वह घबड़ा उठा। नीरजा भी परेशान थी कि वह क्या करे तब तक उसने देखा कि एक स्वस्थ युवक पास वाली कोठी से प्रातः परिभ्रमण के वेष में उसकी ओर बढ़ता चला आ रहा है। युवक के पास आते ही नीरजा ने क्षण भर उसे ऊपर से नीचे तक देखा। वह उसकी उस सुन्दरता पर आवाक् रह गयी। निर्मल ने उसे अपनी ओर इस प्रकार देखते हुए मर्यादा पूर्वक पूछा "कहाँ से आ रही हैं आप लोग ?"

"अमुक जगह से महोदय ! एक आवश्यक कार्य से शीघ्र ही घर पहुँचना है पर मोटर ऐसे जगह धोखा दे गई कुछ बस ही नहीं चलता। क्या करें कोई सवारी भी इस समय नहीं दिखलाई पड़ती है" कहकर नीरजा ने अर्थपूर्ण दृष्टि से उसकी ओर फिर देखा। निर्मल ने भी उस सम्भ्रान्त महिला की ओर एक भरी निगाह से देखा और देखते ही समझ गया कि यह किसी भद्र परिवार की सुशिक्षित तथा पूर्ण सभ्य नारी है अतः मानवता तथा शिष्टाचार से प्रेरित होकर उसने उसे अपनी कार से उसके इच्छित स्थान पर भेज देने के लिए कहकर पुनः अपने बँगले की ओर लौट पड़ा। नीरजा ने इसके लिए उसे धन्यवाद दिया तथा निर्मल के पीछे बंगले की ओर हो लिया। ड्राइवर भी कुछ दूर तक साथ चला पर न जाने क्या सोच कर पुनः अपनी कार में लौट आया। निर्मल ने मुड़ कर देखा और ड्राइवर को अपने साथ ही चलने के लिए पुकारा पर नीरजा ने यह कहते हुए मना कर दिया कि ड्राइवर को आप वहीं रहने दें और आप भी जहाँ जा रहे हैं जाँय तब तक मैं यहीं आपके बँगले पर बैठी रहती हूँ जब तक पूर्ण उजेला नहीं हो जाता। "उफ ! आपको अकारण ही इतना कष्ट उठाना पड़ा कहकर वह चुप हो गई।

"इसमें कष्ट उठाने की क्या बात, यह तो प्रत्येक मानव का कर्तव्य है जो हमारे सत्संग तथा गुरुदेव का अटल सिद्धान्त है" कहकर निर्मल कुछ रुका तबतक वह बीच में ही बोल उठी "क्या मैं आपके सत्संग और

गुरुदेव के विषय में जानने की धृष्टता कर सकती हूँ" पूछकर नीरजा ने बात-चीत का एक अच्छा मसाला ढूंढ़ लिया।

"क्यों नहीं, और निर्मल ने उसके मुख्य सिद्धान्तों पर एक छोटी सी वक्तृता दे डाली।

सुनकर नीरजा ने पूछा "क्या हम नारियों को भी उसमें स्थान है?"

"अवश्य! जिसके लिए प्रत्येक बृहस्पतिवार को यहाँ एक छोटा मोटा सत्संग भी होता है इसमें आसपास की बहुत सी आधुनिक शिक्षित नारियाँ भी भाग लेती हैं। जहाँ उनके कुछ प्रवचन तथा भजन कीर्तन भी होते हैं तथा राष्ट्रीय उत्थान की कुंठित धारा में एक नवीन प्रवाह लाने के विषय पर भी विचार होता है और तद्विषयक भावनाओं को जनता तक पहुँचाने के लिए एक मासिक पत्रिका भी निकलती है" कहकर निर्मल ने अपने ड्राइंग रुम से एक पत्रिका लाकर नीरजा को दे दिया। तब तक यथेष्ट उजेला हो चला था। अतः निर्मल अपने ड्राइवर को बुला कर नीरजा को उसके स्थान पर पहुँचा देने का आदेश देकर टहलने के लिए जाने लगा और नीरजा भी कार में बैठ कर अपने घर को चली गयी।

अठारहवाँ

नीरजा ने अपने भवन पहुँच शौचादि से निवृत्त हो, स्नान किया और कुछ जलपान कर सो गई। अपराह्न के भोजन के लिये जब नौकरानी ने उसे जगाया तो वह आज अन्य दिनों की अपेक्षा कुछ अधिक अलसाई सी प्रतीत हुई। भोजन के बाद वह पुनः कपड़े बदल कर जब आइने

के सम्मुख खड़ी हो श्रृङ्गार करने लगी उस समय उसने अपने रूप के उस विकसित यौवन की मादकता को स्पष्ट विहँसते हुए देखा जिसके इर्द-गिर्द, पाने की इच्छा से कितने ही लोलुप युवक-भौंरे दिन-रात चक्कर लगाया करते हैं देखकर गर्व से जैसे फूल उठी। तबतक एकाएक उसकी दृष्टि पास के टेबुल पर रखी उस पत्रिका पर जा पड़ी। जिसे देखते ही उसे सत्संग की बात याद हो आई और नौकरानी को बुलाते हुए कहा "देखना आज मैं अमुक जगह एक सत्संग में जाऊँगी जहाँ कुछ भजन-कीर्तन तथा वाद्य-गायन का आयोजन है, जिसके लिये मुझे कल का ही निमन्त्रण मिल चुका है जिसे मैं कदाचित भूल ही जाती पर इसी पत्रिका ने जैसे याद दिला दिया और पत्रिका खोलकर पढ़ने लगी। पत्रिका समाप्त करने के बाद जब उसने घड़ी की ओर देखा तो चार बज रहा था। उठकर स्नानादि किया, कपड़े बदले और सतसंग में चलने को तैयार हो गई। तबतक नौकरानी चाय लेकर आ गई। चाय की सुरकी लेते हुए नीरजा ने कहा "सम्भवतः मैं आठ या नौ बजे तक लौट आऊँ और यदि आने में कुछ देर हो तथा साहब आ जायँ जैसा कि उन्होंने आज यहीं आने के लिए कहा है तो उन्हें कुछ देर तक यहीं बैठाये रहना और कह देना कि कहीं से कोई निमन्त्रण आया था कदाचित् वहाँ कोई सत्संग होने वाला है जिसमें भजन-कीर्तन का भी आयोजन है उसी में गई हैं, आती ही होंगी। देखना किसी प्रकार बेअदबी न होने पावे, और न जाने क्यों फिर कुछ सोचकर ऐसा कहने के लिये मना कर दिया और चलने लगी। चलते समय उसने पुनः उसे बुलाया और यह आदेश देते हुए चलने लगी "देखना साहब से केवल इतना ही भर कहना कि "वह किसी कार्य विशेष से कहीं बाहर गई हैं आती ही होंगी" समझी न और चली गई।

रास्ते में नीरजा ने पुनः उस पत्रिका को पढ़ना प्रारम्भ किया। इस बार पत्रिका का एक-एक शब्द जैसे उसे वेद-वाक्य-सा प्रतीत होने लगा। उसे अकस्मात् ही अपने इस जीवन से जैसे घृणा-सी होने लगी। उस

समय उसका पिछला जीवन जैसे साकार होकर उसके सामने नाचने लगा। "वह एक दिन किस प्रकार विधवा हुई थी और किस प्रकार सांसारिक प्रवंचकों से प्रवंचित होकर इस नारकीय कुकृत्य के लिये अग्रसर हुई थी। उफ ! उसका पतिदेव अशोककुमार कितना स्वस्थ तथा सुन्दर युवक था। उस समय अकस्मात ही गाँव में हैजे का प्रकोप हुआ। प्रथम अशोक पर ही इसका आक्रमण हुआ। उसके मरते ही जैसे घर में हाहाकार-सा मच गया। अपने इकलौते पुत्र-शोक से आहत हो किस प्रकार धीरे-धीरे उसके सास-ससुर भी एक-एक कर इस संसार में केवल उसे ही अकेली छोड़ चल बसे। फिर किस प्रकार घर-बाहर जगह-जमीन आदि का सारा भार उसके मत्थे आ पड़ा।

वह अबतक पर्दे में ही रहा करती थी। यहाँ तक कि उसके सास-ससुर तक उसका मुख अच्छी तरह नहीं देख पाये थे। ऐसी विकट परिस्थिति में वह क्या करे जैसे कुछ समझ ही नहीं पा रही थी। उन दिनों जब अशोक बीमार था उसका साथी अनिल उसकी बड़ी सेवा किया करता था। उसके माँ-बाप लाख मना करते कि हैजे की बीमारियों में इस प्रकार किसी के घर नहीं आया-जाया जाता तो वह उनकी एक न सुनता और रात-दिन उसकी सेवा में तन-मन से लगा रहता।

अशोक की मृत्यु के बाद भी जब गाँव के अन्य लोगों ने अनिल को इस प्रकार अशोक के घर बने रहने के लिये उसे मना करते तो वह उनसे हँस कर कह देता "यदि ऐसी विकट परिस्थिति में भी वह अशोक के घर की, उसके माँ-बाप की, देखभाल न करे तो उसका साथी अशोक स्वर्ग से भला उसे क्या कहेगा" और बरबस ही उसके आँखों में शोकाश्रु भर आता।

अनिल ही गांव में अशोक का सबसे बड़ा साथी और उसका पड़ोसी था। जितना ही सुन्दर और स्वस्थ अशोक था उतना ही अनिल भी। जितनी उनमें शारीरिक एकता थी उतनी ही आन्तरिक एकता भी। लोग

उन्हें राम और लक्ष्मण कह कर पुकारा करते थे। अशोक के मरते ही अनिल का नीरजा के जीवन में अकस्मात् ही प्रवेश होने लगा। नीरजा इस बात को अच्छी तरह जानती थी कि अनिल का इस प्रकार उसके जीवन में प्रवेश पाना उसके लिए कभी भी विपत्ति का कारण बन सकता है क्योंकि वह अभी तक अविवाहित था। फिर भी दोनों दिनों दिन एक दूसरे के अत्यन्त निकट आते गये। इसलिए कि अनिल उसके पति का अंतरंग मित्र था जिसने नीरजा के उस विपत्ति काल में उसके घर के सभी व्यक्तियों की अपने प्राण की बाजी लगा कर सेवा की थी और यही कारण था जिससे उसने अनिल से पर्दा करना बहुत कुछ कम कर दिया था। पति और सास ससुर के मरने के बाद गांव वालों ने उसे सारा खेत बांट पर देने की सलाह दिया पर नीरजा को इस बात का भय था कि कहीं खेत बांट पर दे देने से लोग हड़प न लें अतः वह उसी प्रकार अपनी खेती बारी का कार्य करती रही। घर के सारे कार्यों को वह स्वयं देखती और बाहर मजदूर आदि देखते थे। जब कभी कार्य विशेष आ जाता वह अनिल को भी बुला लेती पर वह घर में बहुत कम जाता।

फाल्गुन का महीना था। किसान खेती से अनाज काट काट कर खलिहानों में इकट्ठा कर रहे थे। इस समय मजदूर पाने में किसानों को एड़ी-चोटी का पसीना एक करना पड़ता है उनमें होड़ सी लग जाती है और जो ऐसा करने में पिछड़ा कि उसकी लवनी गई। नीरजा के लिए यह बड़ा कठिन कार्य था इसलिए अनिल से उसने बुलाकर इसके लिए प्रार्थना की। बस क्या था अनिल रात दिन एक कर उसके सारे अनाज खेतों से कटवा कर खलिहान में इकट्ठा कराने लगा। अन्तिम दिन जैसा कि गांव वालों में प्रथा है मजदूरों को उनकी इच्छानुकूल मजदूरी दी जाती है देने दिलाने में अनिल को यथेष्ट विलम्ब हो गया। वह जब घर लौटा तो काफी अँधेरा हो चुका था। इस विलम्बता को सोचकर वह बड़ी तेजी से पग बढ़ाता गांव की ओर चल पड़ा। तब तक गांव के कुछ लोग उसे बीच ही में आ घेरे और होली स्थल पर चल कर फाग गाने के लिए

विवश करने लगे। उसने उनसे कितनी ही बार प्रार्थना की कि वे आज उसे जाने दें इसलिए कि उसे काफी विलम्ब हो चुका है फिर अभी उसे अशोक के घर भी जाकर सब हाल-चाल बताना है पर किसी ने कुछ भी न सुना और उस दिन उसे फाग गाने जाना पड़ा।

होली गाने के बाद जब वह घर लौटा तो रात काफी बीत चुकी थी। अनिल ने सोचा कि वह चुपके से घर जाकर सो रहे और नीरजा को उसके खलिहान की बात दूसरे दिन बताये। पर न जाने क्यों इसके लिए उसका दिल तैयार ही न हुआ।

होली गाने से आज उसका मन अकारण ही चञ्चल हो उठा था जो वासना के मृदुल थपेड़ों से मर्माहत होकर काँप रहा था। उसने नीरजा को देखा था और देखा था उसके रूप और विकसित यौवन के खुमार को जो उसके लिये, उसके रास्ते में आज एक नई पहेली बन रहा था। उसके मस्तिष्क में एक प्रलयंकर झंझावात प्रवाहित होने लगा। रास्ते में चलते चलते वह खड़े होकर कुछ सोचने लगता और जब वासना जनित बेचैनी अधिक बढ़ जाती तो वह नीरजा के घर की ओर मुड़ पड़ता और बड़ी तीव्रता से उसी ओर बढ़ने लगता। यह सोचकर कि वह आज उससे अपनी इस दुर्बलता का हाल अवश्य कह देगा और पागल की भाँति दौड़ने लगता।

नीरजा नित्य की भाँति अब तक अनिल की प्रतीक्षा में बैठी थी। पर आज अनिल आते ही धम से एक चारपाई पर लेट गया। नीरजा उसकी इस दशा पर घबड़ा सी गई और झट से उठकर उसके बदन का ताप-देखने लगी यह सोचकर कि क्या उसकी भी तबीयत खराब हो गई? पर नीरजा के इस स्पर्श ने अनिल की वासना को और भी जगा दिया। उसने नीरजा की दोनों कोमल भुजाओं को जोर से पकड़ लिया पहले तो नीरजा ने इसका विरोध किया पर जब उसने बलपूर्वक उसे खींच कर अपने बाहु पाशों में कस लिया और उसके अधरों से अपना अधर सटा दिया

तो उसका सोया हुआ यौवन भी जैसे जाग उठा। वह भी बेसुध सी अनिल की गोदी में लुढ़क गई। कितने ही दिनों तक दोनों का इसी प्रकार प्रेम-व्यवहार चलता रहा। पर दुनिया के लिये उनका प्रेम अब भी पवित्र तथा निष्कलंक ही बना रहा।

नीरजा के स्वास्थ्य में भी अब कुछ परिवर्तन आने लगा और उसे यह स्पष्ट मालूम हो गया कि अवश्य ही कोई भावी सन्तान उसके उदर में प्रवेश कर गई है और चिन्तित हो उठी। एक दिन अनिल से भी उसने इसका पता बता दिया, सुन कर वह सन्न हो गया। उस समय अनिल को अपने ऊपर घृणा-मिश्रित क्रोध हो आया यह सोच कर कि उसने अपने एक अन्तरङ्ग मित्र के साथ विश्वासघात किया है और लज्जा से गड़ा जाने लगा। एक दिन तो उसने यहाँ तक सोचा कि वह अपने इस कुकृत्य से त्राण पाने के लिये अपनी आत्म-हत्या ही कर डाले पर नीरजा के प्रेम ने उसे ऐसा करने से रोक लिया। पर लोकापवाद से तो उसे बचना ही था अतः एक दिन वह नीरजा को लेकर कहीं भाग गया। शहर में पहुँच उसने किराये का मकान लिया और आनन्दपूर्वक रहने लगा। थोड़े ही दिनों में एक नवजात शिशु ने भी जन्म ले लिया।

अब तक नीरजा के पास की लाई हुई सारी पूँजी समाप्त हो चली थी। अतः पेट भरने की अब एक नई समस्या उनके सन्मुख आ उपस्थित हुई, और अनिल को कोई रोजगार पाने की चिन्ता सताने लगी। इसके लिये वह कई बार पूरे शहर का चक्कर भी लगा आया। पर उसकी इच्छानुकूल कोई भी कार्य उसे शहर में न मिला। एक दिन जब वह इसी तरह बाहर से घूम कर आया तो उसका सारा शरीर जल रहा था। उस समय नीरजा ने उसके शरीर पर चेचक के दाने स्पष्ट देखे जिसे देखते ही वह किसी भावी आशंका से काँप उठी, और हुआ भी अन्त में वही। एक दिन अनिल भी उठ कर इस दुनिया से चला गया। इसके बाद चेचक का प्रकोप उस नव-जात बच्चे पर भी हुआ और वह भी कुछ एक दिन में ही इस लोक से चल बसा।

इस संसार में अब नीरजा अकेली ही रह गई। उसे इस प्रकार अकेली देख एक दाई जिसकी वृत्ति पहले वेश्यावृत्ति रही थी नीरजा को अपनी ओर आकर्षित करने लगी, तरह तरह के प्रलोभन से उसे अपने प्रभाव में लाने लगी। जीविका का कोई अन्य सहरा न देख नीरजा भी उसकी ओर खिंचने लगी। वह जितनी ही सुन्दर और मोहक रूप वाली थी उसका गला और स्वर भी उतना ही मधुर और कोकिला जैसा था। बस थोड़े से ताल और ठेकों की आवश्यकता थी जिसे नीरजा ने बहुत थोड़े समय में ही सीख लिया।

अब वह उक्त शहर की एकमात्र सर्व-सुन्दरी नर्तकी थी जिसकी केवल एक चितवन पर कितने ही युवक अपने जीवन को होम कर देने में नहीं हिचकते। सोचते सोचते नीरजा निर्मल के बँगले के सामने आ गई और टाँगे वाले ने टाँगा फाटक पर लाकर खड़ा कर दिया। नीरजा धीरे से उतर कर बँगले के भीतर चली गई।

—:o:—

उन्नीसवाँ

सतसंग में आने वाली नवागान्तुक स्त्रियों के स्वागत का भार केवल उमा के ही ऊपर था अतः नीरजा को टाँगे से उतरते और बँगले की ओर बढ़ते देख उमा जब उसे लेने के लिये आगे बढ़ी तो उसे नीरजा की सूरत कुछ पहचानी हुई सी प्रतीत हुई। यद्यपि उसमें पहले की अपेक्षा बहुत अधिक परिवर्तन हो गया था।

उमा ने सदा की भाँति बढ़ कर नीरजा से हाथ मिलाया और एक क्षण के लिए उसे ऊपर से नीचे तक देख लिया। नीरजा को भी उमा की सूरत कुछ पहचानी-सी प्रतीत हुई। उसमें वाक्-चातुर्यता तो थी ही अतः हँसते हुए उमा से उसका पूर्व परिचय पूछते हुए कहा कि वह उसे अमुक जगह कभी देख चुकी है सुन कर उमा भी अवाक्-सी उसकी ओर देखने लगी और कुतूहलपूर्ण शब्दों में कहा "क्या आप वही नीरजा हैं जिसका विवाह अशोक कुमार से हुआ था।"

उमा भी उस अशोक को जानती थी इसलिए कि पहले उसका विवाह उसी अशोक से होनेवाला था पर अशोक के पिता ने इतना अधिक दहेज माँगा कि उसके पिता अपनी सारी सम्पत्ति बेंच कर भी देने में असमर्थ हो गये। इसके लिये उमा के पिता ने अशोक के कई एक घनिष्ट रिस्तेदारों को साथ लेकर उन पर दबाव भी डाला, स्वयं भी बहुत अनुनय-विनय किया पर जब वे टस से मस न हुए तो हताश हो दूसरा घर-बर ढूँढ़ने लगे।

उमा के मुख से अशोक का नाम सुनते ही नीरजा के कलेजे पर साँप लोटने लगा। उसकी आँखें एकाएक डबडबा आईं। उस समय उमा उसकी इस दशा को देख सन्न हो गई तथा बातचीत का सिलसिला बदलते हुए जब नीरजा से उसके पतिदेव की कुशलता के लिए प्रश्न किया तो बरबस ही उसका गला भर आया। वह उमा के गले से मिल फूट-फूट कर रोने लगी और आद्योपान्त अपने जीवन की सारी घटनायें कह सुनाईं। उमा उसके इस परिवर्तित जीवन की दुःखद घटनाओं को सुनकर व्यथा से तिलमिला उठी। उसे अपने अतीत जीवन की एक-एक घटनायें सामने आने लगीं और बरबस ही उसके नेत्रों में जल भर आया। बहते हुए अश्रु-प्रवाह को पोंछकर उमा ने भी एक-एक कर अपने पर बीती उन सारी घटनाओं को कह सुनाया और अनेकानेक प्रकार से उसे सान्त्वना देते हुए कहा कि यदि उसे अपने निवास-स्थान पर कोई कष्ट हो तो वह निःसंकोच उसी के स्थान पर आकर रह सकती

है। वह उसे अपनी बड़ी बहन सदृश समझेगी तथा यथासाध्य उसकी सेवा करती रहेगी। नीरजा ने इसके लिये उसे धन्यवाद दिया और कहा कि अब उसे किसी प्रकार का भी कष्ट नहीं है। वह धन-धान्य सभी से पूर्ण सम्पन्न है। तब तक बँगले के अहाते में निर्मल की कार आती हुई दिखलाई दी जिसे देखकर उमा, नीरजा के साथ अपने ड्राइंग रूम में चली गई।

निर्मल के आते ही सतसंग की कार्यवाही प्रारम्भ हो गई। सतसंग में स्त्रियों के बैठने का स्थान पुरुषों के ठीक सामने बँगले के बरामदे में जहाँ एक पतला-सा पर्दा पड़ा था, बनाया गया था। उस समय तक सभी लोग जो भी पूजा में एकत्रित होने वाले थे आकर उपस्थित हो चुके थे। गद्दी पर गुरुदेव भी आकर पदासीन हो गये। उनके एक बगल में गद्दी के नीचे निर्मल तथा दूसरी ओर शहर के अन्य गण्यमान्य व्यक्ति आकर पंक्ति-बद्ध बैठ गये। पहले थोड़े समय तक कालेज की सुशिक्षित लड़कियों द्वारा एकाध भजन हुआ फिर उमा ने नीरजा से भी भजन सुनाने के लिये अनुरोध किया।

नीरजा अपने स्थान से उठी और हारमोनियम हाथ में ले इतने सुन्दर, सुरीले तथा भावपूर्ण शब्दों में मीरा के कई एक भजनों को गाया कि सारे के सारे लोग मन्त्रमुग्ध हो गये। उस समय नीरजा ने कितना गीत गाया और उसके गाने में कितना समय लगा जैसे किसी को कुछ पता ही न चला। गुरुदेव तो नीरजा के पहले गीत पर ही प्रेम-विह्वल हो योग में समाधिस्थ हो गये। जब उन्होंने अपनी समाधि तोड़ी तो देखा कि ग्यारह बज रहे हैं पर लोग अब भी नीरजा के भजनों को मन्त्रमुग्ध-से सुन रहे हैं।

गुरुदेव ने लोगों को थोड़ी देर तक आन्तरिक सतसंग के लिए निर्देश किया तथा पुनः समाधिस्थ हो गये। आंतरिक सतसंग के बाद कुछ एक लोगों ने देश की वर्तमान दशा पर तथा उसकी बढ़ती हुई भौतिकता पर कई एक सारगर्भित प्रवचन किया। अन्त में निर्मल ने

सबको धन्यवाद देते हुए उस दिन की सफलता का श्रेय नीरजा को देकर सभा की कार्यवाही अगले दिन के लिए स्थगित कर दिया। सबके जाने के बाद जब नीरजा भी उठ कर चलने लगी तो उमा ने उसके हाथों की पकड़ लिया। पर नीरजा ने कतिपय आवश्यक कार्यों को बतला कर उस दिन के लिये उससे यह कहते हुए क्षमा प्रार्थना की कि वह अगले दिन यहाँ अवश्य आयेगी तथा रात भर रहकर अन्य दुःखा-सुखा कहेगी और नमस्कार कर चलने लगी।

उस समय रात के १२ बज रहे थे। अँधेरी रात थी, तिस पर सुन-सान और बीहड़ रास्ता और सवारी का भी कोई साधन नहीं, इस बात पर विचार किये बिना ही नीरजा, उमा से छुट्टी लेकर चल रही थी तब तक निर्मल भी गुरुदेव को उनके कमरे में पहुँचाकर आ गये। नीरजा को इस प्रकार इतनी रात को अकेली जाते देख अपने ड्राइवर को बुलाया पर वह उस समय अचानक ही बुखार से इतना काँप रहा था कि उसके पैर ही शराबियों की भांति भूमि पर ठीक-ठीक से नहीं पड़ रहे थे। लाचार होकर निर्मल, नीरजा को स्वयं ही कार चला कर उसके घर तक पहुँचाने के लिए कार में बैठा। यद्यपि नीरजा ने उनके इस प्रकार कष्ट उठाने के लिये उसे धन्यवाद दिया और यह कह कर कार में बैठने से इनकार किया कि वह अकेली ही चली जायगी, इस समय भी रास्ते में उसे इक्की-दुक्की सवारियाँ अवश्य मिल जायँगी आदि-आदि···। पर निर्मल ने यह उचित न समझा और उसे कार में बैठाकर उसके घर तक पहुँचाने के लिए चल ही दिया। उस समय नीरजा कार में बैठ तो गई पर न जाने क्यों रह-रह कर उसका हृदय धड़कने लगा। रह-रह कर रास्ते में उसे साहब की बात याद हो आती और वह घबड़ा उठती। फिर निर्मल से वहीं पर कार रोक देने के लिए प्रार्थना करती कि अब यहाँ से अच्छी तरह चली जायगी उन्हें और आगे कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं पर निर्मल उसे निश्चल भाव से उत्तर देता "घबड़ाइये नहीं, बैठी रहिये मैं अभी पलक झपते ही पहुँचाये देता हूँ

और सचमुच ही कार थोड़ी ही देर में नीरजा की कोठी के सम्मुख आकर खड़ी हो गई। उस समय नीरजा ने देखा कि साहब की कार पहले से ही आकर खड़ी है और वह घबड़ा कर कार से झट निकल पड़ी। उसके उतरते ही निर्मल ने अपनी कार घर की ओर मोड़ दिया पर नीरजा ने सोचा कि यह उचित नहीं है और शिष्टता के नाते उससे केवल एक पत्ता पान ही रुक कर खा लेने के लिए आग्रह किया। निर्मल को भी उसके उस आग्रह पर रुकना ही पड़ा और नीरजा झट से अपने ड्राइंग रूम से एक तश्तरी में पान सजा कर ले आई और खिलाने के बाद जब लौटी तो साहब उसे देख आग-बबूला हो उठे, तथा गरजते हुए क्रोधपूर्ण शब्दों में उक्त नवागन्तुक के विषय में उसका परिचय पूछा। नीरजा कुछ कहे, तब तक साहब ने अपनी पिस्तौल निकाल लिया। उस समय नीरजा ने देखा कि साहब क्रोध से कांप रहे हैं उनके होठ क्रोध से फड़क रहे हैं और नथुने श्वाँस की तीव्रता सहने में असमर्थ हो बार-बार फूल और पचक रहे हैं। उनका मुख विकृत और भयानक हो रहा है जिसे देख नीरजा भय से कांप उठी और भयभीत हो वहां से भागना चाहा तब तक साहब ने यह कहते हुए पिस्तौल चला ही दिया कि लो! अपने किये का फल भोग जो हम गजटेड अफसरों को उल्लू बनाती फिरती हो और नीरजा चीख मार कर वहीं एक कोने में दुबक गई। गोली उसके बाहुपाश को छीलती हुई उसकी दाई के सीने में जा लगी जो दूसरे कमरे में सामने ही चुपचाप बैठी थी और वह हाय राम! कहकर वहीं धम से चित हो गई। यह वही दाई थी जिसने नीरजा को इस वृत्ति की ओर मोड़ा था।

पिस्तौल छूटने की आवाज तथा नीरजा और उसकी दाई की चीख ने पड़ोस के लोगों को जगा दिया। दौड़ कर जब वे आये तो देखा कि एक युवक हाथ में पिस्तौल लिए खड़ा है और नीरजा एक कोने में दुबकी पड़ी हैं तथा उसकी दाई के सीने से रक्तश्राव हो रहा है।

———

बीसवाँ

जब से बाबा राघवदास कृष्णपुर में आये हैं तब से उस गाँव में एक नवीनता सी आ गई है। गाँव में उनके रहने का स्थान गाँव वालों ने उसी कृष्ण जी के मन्दिर के बगल में बनवा दिया है। मन्दिर के सामने एक बड़ा सा विस्तृत ऊबड़ खाबड़ मैदान है जिसको बाबा जी ने तोड़ फोड़ बिलकुल समतल चौरस बना दिया है। थोड़ी सी जगह लड़कों के खेल कूद के लिये छोड़ शेष भूमि में आम, नीबू, कटहल आदि के वृक्ष लग चुके हैं, तथा कुटी के चारो ओर फूलों की छोटी सुन्दर क्यारियाँ। बाबा-जी हर समय बड़ी लगन के साथ उसी बगीचे में जुटे रहते हैं। उनकी इस लगन और कर्मठता को देख गाँव वाले भी अपना बचा हुआ समय बाबा-जी के साथ ही व्यतीत करते हैं और शाम को सब उन्हीं की कुटी पर इकट्ठा होकर रामधुन, संकीर्तन तथा रामायण का पाठ करते कराते प्रायः दस बजे तक का समय व्यतीत कर देते हैं। बाबा जी के रामायण कहने का ढंग इतना सुन्दर और आकर्षक था कि पुरुषों के अतिरिक्त गाँव की स्त्रियाँ भी कथा सुनने नित्य प्रति उपस्थित रहा करती थीं। बाबा जी की अवस्था देखने से इस समय पचास से ऊपर की मालूम पड़ती थी। उनका कद लम्बा, रंग कुछ कुछ सावलापन लिये, दोहरा बदन, चौड़ा वक्षस्थल, ऊँचा ललाट जिस पर लगा हुआ चन्दन का रामनामी सुन्दर टीका, पकी और लम्बी दाढ़ी जो उनके तोंद तक लटक रही थी देख लोग उनमें कभी कभी

परशुराम जी के स्वरूप की कल्पना करने लग जाते थे पर वे थे बड़े ही मृदुभाषी तथा क्रोध रहित।

प्रातः जब स्त्रियाँ गोद में बच्चा लिये नजर झराने उनके पास आतीं तो वे उन बच्चों को अपनी गोद में लेकर बहुत देर तक हलराते रहते। इसके अतिरिक्त छोटे छोटे गाँव के अन्य लड़के भी बाबा जी को हर समय घेरे रहते। इसलिये कि बाबा जी उन बच्चों को खाने के लिये बतासा और खेलने के लिये फूल की छोटी छोटी मालायें बना कर हर समय रक्खे रहते। इन्ही सब कारणों से गाँव वालों की बाबा जी पर अपार श्रद्धा है। मन्दिर से कुछ ही दूरी पर एक पक्का सुन्दर सा चबूतरा बना हुआ था जिस पर शहर के धनी मानी रईस थक कर विश्राम लेते थे जो शहर के कोलाहल से ऊब कर प्रातः और सन्ध्या को उस ओर टहलने के लिये नित्य प्रति आया करते थे।

कृष्णपुर गंगा जी के किनारे बसा हुआ बहुत प्राचीन बड़ा सा गाँव है, जहाँ के लोगों का मुख्य पेशा अब तक खेती रही है उस गाँव से एक कच्ची सड़क निकल कर शहर जाने वाली सड़क में ठीक निर्मल के बँगले के सामने मिल जाती है। गाँव वाले इसी सड़क से चल कर अपनी साग-सब्जी शहर को बेचने के लिये ले आते हैं। यद्यपि सड़क कच्ची ही है पर है समतल, धूलि रहित। इसलिये मोटरों का अत्याचार अभी तक इस सड़क पर नहीं हो पाया है।

निर्मल का भी यह नित्य का नियम था कि वह संध्या को हाईकोर्ट से आने के पश्चात कुछ नाश्ता पानी कर उमा के साथ उसी कच्ची सड़क से चल कर कृष्णपुर तक आता तथा भगवती भागीरथी को नमस्कार कर उसी चबूतरे पर कुछ देर तक विश्राम करता तथा अँधेरा होने के पूर्व ही घर को वापस लौट जाता।

उस दिन भी जब वह नित्य की भाँति टहलने के लिये गया तो देखा कि वहाँ एक विशेष जलसे का आयोजन हो रहा है। जहाँ पर एक लम्बा

चौड़ा चँदोआ टंगा हुआ है, जिसके भीतर जनता मूकवत बैठी कोई नृत्य देख रही है। सबसे अलग एक ऊँचा सा आसन बना हुआ है जिस पर एक वृद्ध महात्मा बैठा हुआ है। बीच में एक सर्व सुन्दरी नर्तकी अपनी नृत्य कला से सबको मुग्ध किये है। निर्मल भी अकारण कुछ क्षण के लिये आकर वहीं रुक गया तब तक एक ग्रामीण भीतर से उठा और निर्मल के पास आकर उसे भी चँदोये के भीतर बैठ जाने के लिये आग्रह करने लगा। निर्मल उसके इस आग्रह को ठुकरा न सका और उमा के साथ आकर एक जगह पर बैठ गया। उमा और निर्मल को उस नर्तकी ने क्षण भर के लिये देखा और न जाने क्यों अपना नृत्य बन्द कर बाबा जी के चरणों में नमस्कार कर एक ओर आकर बैठ गई। उस समय बाबा जी अपने आसन से धीरे धीरे उठे और सभा के मध्य आकर खड़े हो गये। फिर जलसे के आयोजन पर उसके कारणों पर प्रकाश डालते हुये कहा "गाँव का यह घाट अत्यन्त प्राचीन होते हुए भी अब तक यों ही कच्चा और ऊबड़ खाबड़ अवस्था में पड़ा हुआ है जिसके उद्धार के लिये ही गाँव वालों की ओर से इस जलसे का आयोजन किया गया है। अतः पधारे हुये प्रत्येक सज्जनों से गाँव वालों की ओर से मुझे यह कहने का अधिकार प्राप्त हुआ है कि प्रत्येक उपस्थित जन अपनी आय पर विचार करते हुए इस कार्य के लिये समुचित द्रव्य दे। कार्य-विशेष का श्री गणेश कराने में यश प्राप्त करें तथा बारी से उठ कर अपना अपना नाम लिखाने का कष्ट उठावें" कह कर फिर अपने आसन पर आकर बैठ गये। उस समय सभा में एक गहरा सन्नाटा सा छा गया और उपस्थित जन एक दूसरे की ओर देखने लगे।

निर्मल ने उस समय बाबाजी की ओर बड़े ध्यान से देखा उसे वह सूरत कुछ पहचानी सी प्रतीत हुई। यद्यपि उसमें अब पहले की अपेक्षा बहुत अधिक परिवर्तन हो गया था। सहसा सन्नाटे को चीरती हुई नीरजा अपने आसन से उठी और लिस्ट में सबसे पहले अपना नाम लिखा दिया। फिर बारी बारी से एक एक कर सभी लोग उठने लगे और अपना

अपना नाम लिखा कर चलते गये। उस समय निर्मल ही केवल एक ऐसा व्यक्ति था जिसने लिस्ट में अब तक अपना नाम नहीं लिखाया था। उसने एक क्षण के लिये उमा की ओर देखा जो निर्मल की ओर बहुत देर से ही एक अर्थ-पूर्ण दृष्टि से देख रही थी। उसे देख निर्मल ताड़ गया कि वह क्या चाहती है और उठ कर अपना भी नाम लिस्ट में लिखा दिया। निर्मल नाम सुनते ही बाबाजी के मस्तक में एक प्राचीन स्मृति ने ठोकर मारी। वे लिस्ट से अपना ध्यान हटा कर क्षण भर के लिये ऊपर से नीचे तक निर्मल को देख गये और लिस्ट तथा कलम दवात छोड़ एकाएक चिल्ला उठे अरे आप निर्मल बाबू! यहाँ कैसे? और आप बड़े बाबू इस वेश में··· कह कर दोनों एक दूसरे के गले मिल गये। उस समय उनकी आँखों से चुपचाप अश्रु प्रवाहित हो रहा था। बैठी हुई जनता की अपार भीड़ ने देखा और उमा हैरान हो रही थी।

—०—

इक्कीसवाँ

पुलिस ने साहब पर खून तथा भ्रष्टाचार का अभियोग लगाया तथा विभाग ने उन्हें उस समय तक के लिए निलम्बित कर दिया जब तक कि उन पर पुलिस द्वारा चलाये गये अभियोग का निर्णय न हो जाय। साहब के निलम्बित होते ही अन्य दूसरे साहब ने आकर उनका पद भार ले लिया तथा साहब उसी जगह "अटैच" कर दिये गये।

साहब पर चलाया गया अभियोग बड़ा घातक तथा संगीन था। इसलिए कि उस समय नीचे से ऊपर तक सभी उसके विरुद्ध थे। साहब इस बात को अच्छी तरह जानते थे और यह भी जानते थे कि इस अभियोग से बचना अब उनके लिए असम्भव सा है, फिर भी वे उसे हल्का कराने में कुछ भी कसर न उठा रक्खे। पास का सारा संचित रुपया वे पानी की तरह बहाने लगे। एक दिन वे अपने इसी अभियोग के विषय में नीरजा से मिलना चाहे और इसी विचार को लेकर कुछ दूर गये भी, पर न जाने क्यों उनके पैर ने आगे बढ़ने से जवाब दे दिया और वे फिर उलटे पाँव लौट आये।

यों तो साहब पहले ही से सिकिया पहलवान रहे पर इस अभियोग ने उन्हें और भी दुर्बल तथा कमजोर बना दिया। उन्हें अब इसी चिन्ता में मीठा-मीठा ज्वर भी आने लगा और रात में खाँसी इतनी बढ़ जाती कि पूरी रात जागते ही बीत जाती। रुपये पैसे की यह हालत हो गई कि थोड़े ही दिनों में पास की सारी पूँजी समाप्त हो गई। कार जो अब तक बची थी वह भी एक दिन इसी सिलसिले में बिक गई।

उस दिन प्रातः जब वे आठ बजे अपने वकील के पास जा रहे थे, सहसा नीरजा सामने से आती हुई दिखलाई पड़ी। वे उसे इस प्रकार सामने से आते देख लज्जा से उसकी निगाह बचा कर दूसरा रास्ता पकड़ कर जाना चाहे पर नीरजा ने उन्हें देख लिया और झट से आगे बढ़कर उन्हें नमस्ते किया। उस समय साहब को उसके नमस्ते का उत्तर देना कठिन हो रहा था। वे उसके सामने आँख उठा कर देख सकने में भी असमर्थ बन रहे थे, उत्तर देना तो दूर की बात थी।

नीरजा इस बात को अच्छी तरह समझ गई कि साहब आज उसके सामने इस प्रकार क्यों लज्जा से गड़े जा रहे हैं जो उसकी किसी भी बात का उत्तर देने में असमर्थ से हो रहे हैं।

उसने उनके उस परिवर्तित स्वास्थ्य तथा अवसाद पूर्ण वेश-भूषा को

भी देखा और देखते ही समझ गयी कि उस दिन पत्रिका में निकली हुई घटना अवश्य ही सत्य है। जिससे उनकी दशा आज इतना दयनीय हो गई है। साहब की उस दशा को देख नीरजा की स्त्रियोजनित करुणा जाग उठी। वह साहब के उस पिछले कुकृत्य को भूल गई और गम्भीर मुद्रा में साहब से उनके उक्त अभियोग के विषय में जब पूछा तो बरबस ही उनकी आँखों में आँसू छलछला आये और श्वाँस तीव्र हो उठी। पर तुरत ही उन्होंने अपनी इस स्थिति पर काबू पाते हुए नीरजा से गम्भीर मुद्रा में कहा "नीरजे तुम अब भी इस प्रकार हमारे विषय में जानने के लिए क्यों इतनी उत्सुक सी दीख रही हो जब कि मैं तुम्हारा हत्यारा सिद्ध हो चुका हूँ। तुम उस दिन किस प्रकार इन पापी हाथों द्वारा हत्या होने से बाल-बाल बच-गई। यह बात उतनी ही सत्य है जितना कि सूर्य और चाँद पृथ्वी और आकाश, जल और पवन। पर क्या तुम इस सत्य को कहने के लिए तैयार हो! यद्यपि इस विषय में पुलिस के साथ ही साथ हमारे कर्मचारी-गण तथा अन्य ठीकेदारान् भी तुम्हारे ऊपर सहीं बयान देने के लिए बार-बार दबाव डाल रहे हैं जिसे तुम्हें कहना चाहिये या नहीं मैं स्वयं भी निर्णय देने में असमर्थ हूँ, इतना ही नहीं मैं आज तुम्हारे सामने खड़ा होने में भी भयभीत हो रहा हूँ। मेरा सारा अंग शिथिल हो रहा है और शक्ति का लोप सा होता जा रहा है मुझे ऐसा मालूम पड़ रहा है जैसे हृदय की गति ही रुक जायगी।

नीरजा ने उस समय साहब के दोनों हाथों को पकड़ लिया और उन्हें सान्त्वना देते हुए अपनी कोठी तक चलने के लिए आग्रह किया। पर साहब ने अपना हाथ छुड़ाते हुए कहा "नीरजे अब बस करो, आगे और कुछ न कहो। मैं अब तुम्हारी कोठी पर जाने योग्य नहीं रह गया हूँ। उफ्! मुझे छोड़ दो, मेरे रास्ते से हट जाओ और सर्वदा के लिए नीरजा साहब का हाथ छोड़कर अलग हो गई।

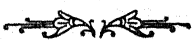

बाइसवाँ

अब निर्मल का यह नित्य का नियम बन गया है कि वह उमा के साथ जब भी कृष्णपुर की ओर टहलने आता, बाबा राघवदास से भेंट किये बिना न जाता। और हाल-चाल पूछने के साथ घाट के विषय में वह उनसे अवश्य पूछता तथा उसके भावी कार्यक्रम के विषय में जो कुछ भी सलाह दे सकता था देता। धन प्राप्ति के नये साधन तथा उपायों को भी बतलाता और इसके लिए सरकार से भी सहायता प्राप्त करने के विषय पर भी विचार-विनिमय करता। उसके इस उत्साह को देख शहर के बहुत से धनी मानी व्यक्तियों ने भी हाथ बँटाना प्रारम्भ कर दिया। तथा सरकार से भी थोड़ा बहुत तद्विषयक अनुमोदन प्राप्त हो गया। इस प्रकार घाट का निर्माण-कार्य बड़े उत्साह तथा जोर-शोर के साथ प्रारम्भ हो गया।

घाट तक आने का जैसे निर्मल और उमा का नियम बन गया था उसी तरह नीरजा का भी। घाट पर वह बहुधा निर्मल के बाद ही पहुँचती और बाबाजी के पास उन लोगों को बैठे देख स्वयं भी आकर चुपचाप उमा के बगल में बैठ जाती। फिर अंधेरा होने के पहले उनके साथ ही लौट आती।

उस दिन एकाएक उमा की तबियत कुछ खराब हो गई और डाक्टरों ने उसे कुछ दिन तक के लिए हवाखोरी करने की कड़ी मनाही

कर दी। अतः निर्मल नित्य की भांति छड़ी घुमाते घाट की ओर लम्बा डग बढ़ाते आ ही रहा था कि बीच में उसे नीरजा मिल गई।

हलो ! मिस नीरजा ! आज हमारे से बहुत पहले ही कैसे ? और नीरजा की ओर हाथ बढ़ाया। नीरजा ने भी मुस्कराते हुए हाथ मिला लिया। नीरजा की उस कमलवत, हथेलियों ने निर्मल के हृदय में एक गुदगुदी-सी पैदा कर दी वे उसको एक विहंगम दृष्टि से ऊपर से नीचे तक देख गये। उसके उस अनिन्द्य सौन्दर्य को देख वे उसमें स्वर्गलोक से उतरी हुई किसी अप्सरा तक की कल्पना करने लगे। यद्यपि नीरजा कितने ही दिन से उनके सतसंग में उपस्थित होकर उसे सफल बनाती रही पर उन्होंने कभी भी नीरजा की ओर इस तरह नहीं देखा था। उस दिन भी जब वे अकेले ही नीरजा को उसकी कोठी तक छोड़ने के लिये गये तो बिना उनकी ओर देखे शीघ्र ही पहुँचा कर लौट आये।

निर्मल से हाथ मिलाते ही नीरजा को उस दिन की बात सहसा याद हो आई कि वह किस प्रकार एक दिन उसकी सुन्दरता पर न्योछावर होकर सतसंग में सम्मलित हुई थी और किस प्रकार उसके उस व्यवहार कुशलता से प्रभावित होकर आध्यात्मिकता की ओर मुड़ी। पर उसके हृदय में पड़ी हुई वह चिनगारी अब भी ज्यों की त्यों बनी थी जो निर्मल को इस प्रकार एकान्त में देख एक बारगी ही जाग उठी। उसने मुसकुराते हुए निर्मल से पूछा "कहिये आज अकेले ही कैसे ! बहन उमा को कहाँ छोड़ दिया ?" नीरजा की उस मुसकान ने पुनः निर्मल के रोम रोम को कपाँ दिया पर उसने तुरत ही अपने को सँभालते हुये कहा "आज उनकी तबीयत कुछ खराब हो गई है और डाक्टरों ने सलाह दिया है कि वे कुछ दिन तक पूर्ण विश्राम लें, टहलने के लिये भी मना कर दिया है।

अच्छा ! ऐसी बात ! कब से ! अभी कल तक तो कोई बीमारी नहीं थी और आज एकाएक इस तरह कैसे कह कर नीरजा कुछ गम्भीर हो गई

और निर्मल भी चुप हो गया। फिर दोनों मूकवत बिना एक दूसरे से बोले घाट तक चले आये। घाट पर आकर देखा तो बाबा जी मजदूरों के साथ अपने काम में जुटे हैं। उसको इस प्रकार आया देख बाबा जी ने अपना काम बन्द कर दिया और नित्य की भाँति उसी चबूतरे पर बैठ परस्पर बातचीत करने लगे। बात चीत के सिलसिले में आज अचानक ही निर्मल को बाबा जी के विगत जीवन की सारी बातें जैसे याद हो आईं कि किस प्रकार से साहब के अत्याचार से पीड़ित होकर इस प्रकार का बाना ग्रहण किये और घर-द्वार सभी कुछ से नाता तोड़ लिया। बाद में उसे अपना भी ध्यान हो आया कि वह कैसे उस दिन आत्म हत्या करने से बाल बाल बच गया। और उसने तुरत ही तद्विषयक प्रसंग बाबा जी से छेड़ ही दिया। बाबा जी ने भी एक एक कर सभी घटनाएँ निर्मल से कह सुनाईं तथा निर्मल ने भी अपने ऊपर किये जाने वाले साहब के उन अत्याचारों को कह डाला। उस समय नीरजा अवाक्-सी उनके चेहरों की ओर देख रही थी और बातचीत समाप्त होने पर जब उसने उक्त साहब का परिचय पूछा तो सुनते ही वह खिन्न हो उठी। उसे साहब के उन अत्याचारपूर्ण कार्यों पर घृणा होने लगी।

वह भी उस साहब को जानती थी और यह भी जानती थी कि किस प्रकार उक्त साहब ने उसके ऊपर गजब ढ़ाया था जो बिना कुछ कारण जाने ही उस पर पिस्तौल चला दी। पर उसने उस समय उनसे कहना उचित न समझा। यद्यपि उस दिन तद्विषयक प्रश्न को लेकर बहुत देर तक बातचीत चलती रही। सन्ध्या-बेला अब समीप आने लगी। सूर्य भगवान् परकटे पक्षी की भाँति नील गगन की गोदी में लुढ़कने लगे। उस समय रवि-रश्मियाँ गंगाजी की लोल-लहरियों से लपट झपट उसी प्रकार मिल रही थीं जिस प्रकार ननिहाल से विदा लेते समय युवतियाँ अपनी माताओं से पर निर्मल और बाबा जी के बातचीत में वही प्रसंग चलता रहा। धीरे-धीरे पृथ्वी की सुघड़ता को सन्ध्या अपने अंचल से ढकने लगी। विहग-गण अपने-अपने जोड़ों

के साथ गगन-मण्डल में चहचहाते हुए अपने नीड़ों को जाने लगे। मजदूरों ने भी काम बन्द कर दिया और अपने-अपने सामानों को यथा-स्थान रख बाबा जी के सम्मुख आ उपस्थित हो गये। मजदूरों की इस भीड़ ने बाबा जी का ध्यान भंग कर दिया और वे बातचीत का सिल-सिला बन्द कर उठने लगे। निर्मल ने भी देखा कि अंधेरा होने लगा है। टहलने के लिए आये हुए सज्जन सब चले जा चुके हैं और जो भी इक्के दुक्के रह गये हैं सब लम्बा डग भरते बढ़ते चले जा रहे हैं। निर्मल ने नीरजा की ओर मुड़ कर कहा "मिस नीरजा! आज आपको अनावश्यक ही इतना विलम्ब हो गया। क्षमा करियेगा इसलिए कि आज का प्रसंग ही ऐसा चल पड़ा था जिसे छोड़ने की जैसे इच्छा ही नहीं हो रही थी। नीरजा ने मुसकराते हुए कहा "इसमें क्षमा की क्या बात! ऐसा तो हो ही जाता है और हाँ चलिये आज मैं भी बहन उमा को देखने के लिये आपके बँगले तक चलूँगी और दोनों बड़ी तीव्रता से उस बढ़ते हुए अन्धकार में ओझल हो गये।

—०—

तेइसवाँ

अदालत खचाखच भरी थी। वकीलगण चूड़ीदार चुस्त पाजामा तथा काली शेरवानी पहने और उसके ऊपर से काला "गाऊन" ओढ़े इजलास की ओर दौड़ रहे थे जिनके पीछे मुअक्किल गण "वकील साहब! वकील साहब! कहते उसी तरफ दौड़ रहे थे जैसे नवजात मेमना बकरियों के पीछे। यों भीड़ तो नित्य ही अधिक रहती है पर आज कुछ कारण विशेष वश न्यायाधीश सुरेन्द्रप्रताप के इजलास पर अन्य

दिनों की अपेक्षा अधिक थी, जिसमें कुछ तो दर्शक थे और कुछ अभियुक्त। सहसा इजलास के सामने एक "जीप" आकर खड़ी हो गई।

एस० पी०, डी० वाई० एस० पी०, शहर कोतवाल, नीरजा और साथ में चार, छः अन्य नागरिक जीप से उतर कर इजलास की ओर बढ़ने लगे। तबतक चपरासी ने पुकार किया "मिस नीरजा तथा निलम्बित साहब वगैरह-वगैरह हाजिर हों" और सब कठघरे के भीतर "हाजिर हुजूर" कह कर एक दूसरे से अगल-बगल अपने-अपने वकीलों को साथ लिए न्यायाधीश के सामने आकर खड़े हो गये। न्यायाधीश ने सबसे पहले नीरजा का बयान लेना प्रारम्भ किया।

"हाँ तो साहब ने तुम्हें मारने के लिए पिस्तौल चलाया था और तुम निशाने से हट, भयभीत हो एक चीख मार अपने ड्राईंग रूम के पश्चिम वाले कोने में बेहोश होकर गिर पड़ीं और छोड़ा हुआ वह निशाना तुम्हें न लगकर तुम्हारी नौकरानी के सीने में जा लगा था, क्या सच है? न्यायाधीश ने एक ही झटके में सब पूछ लिया।

"मुझे बस इतना ही याद है, हुजूर! कि जब मैं अपने ड्राइंग रूम से निकल कर बगल वाले कमरे में जा रही थी तो पीछे से एक धड़ाके का शब्द हुआ और मैं उससे भयभीत होकर चीख मार उसी पश्चिम के कोने में बेहोश होकर गिर पड़ी। उस समय पता नहीं मैं कब तक बेहोश पड़ी रही पर जब कुछ होश हुआ तो देखा कि साहब को दो पुलिस पकड़े हैं एस० पी०, डी० वाई० एस० पी० तथा शहर कोतवाल खड़े होकर मेरी नौकरानी का देख-भाल कर रहे हैं जिसके सीने से खून की एक प्रबल धारा बह रही थी" नीरजा ने कहा।

"अच्छा! यह बता सकती हो कि उस समय पिस्तौल किसके हाथ में थी" न्यायाधीश ने पूछा!

"मैं तो उस समय पिस्तौल को देख ही नहीं सकी हुजूर" नीरजा ने कहा, और न्यायाधीश ने उसे लिख लिया।

"अच्छा यह बताओ कि इसके पहले भी तुमने कभी पिस्तौल देखा था" सरकारी वकील ने पूछा।

जी नहीं। नीरजा ने एक छोटा-सा उत्तर दे दिया।

हाँ! तुमने साहब को पिस्तौल चलाते देखा था, लिख लीजिये हुजूर! सरकारी वकील ने कहा।

"नहीं! नहीं! हुजूर! मैंने पिस्तौल चलाते किसी को भी नहीं देखा था" सुनते ही न्यायाधीश एक क्षण के लिए रुक गया।

"अच्छा तो तुम यह बतला सकती हो कि वे दोनों पुलिस तथा अन्य अधिकारीगण तुम्हारे कमरे में कब प्रवेश किये" सरकारी वकील ने पूछा।

"किसने और कब मेरे कमरे में प्रवेश किया तथा साहब को किसने आकर पकड़ा मैं कुछ भी नहीं बता सकती। इसलिए कि धड़ाके के साथ ही मैं बेहोश हो चुकी थी तथा कब तक उसी अवस्था में पड़ी रही स्वयं भी नहीं बता सकती" नीरजा ने कहा।

"क्या यह सच है कि तुमसे और साहब से घनिष्ठता रही, फिर कुछ अनबन हो गई जिससे साहब ने प्रतिहिंसा की भावना से तुम्हारे ऊपर इस प्रकार पिस्तौल चलाया" सरकारी वकील ने पुनः पूछा।

"यह तो हमारा पेशा ही है साहब कि आज जिससे प्रेम किया कल उसी से खटपट हो गई। फिर दूसरे दिन देखें तो उसी से उसी प्रकार का प्रेमालाप। क्या पति-पत्नी में झगड़ा नहीं हुआ करता?" नीरजा सब कुछ एक ही झटके में कह गई।

न्यायाधीश सुनकर मुसकराने लगे और उपस्थित वकीलगण मुख पर रुमाली रख हँसी को छिपाने के लिये खाँसने का झूठा स्वाँग करने लगे।

फिर साहब का बयान होना प्रारम्भ हुआ और नीरजा वहीं पास में

रखे हुए बेंच पर बैठ गई। उस समय साहब ने अपने को अपराधी तथा नीरजा का हत्यारा बतलाते हुये सारा किस्सा आदि से अन्त तक जो कुछ भी हुआ था कह सुनाया। इसके बाद उन दोनों पुलिसों के तथा एस० पी०, शहर कोतवाल आदि के भी बयान हुये। सबों ने वही बयान दिया, जो साहब ने दिया था। सबका बयान लेने के बाद जज कुछ देर तक गम्भीर मुद्रा में ठुड्ढी पर "फाउण्टेनपेन" का ठेका लगाये न जाने क्या सोचते रहे और फिर दूसरे दिन के लिये फैसले का दिनांक छोड़ लंच के लिये उठ गये। पेशकार ने फाइल समेट कर रख लिया और अदालत दूसरे दिन के लिये उठ गयी।

चौबीसवाँ

उमा को जो उस दिन अकस्मात् ही ज्वर हो आया उसने धीरे-धीरे मियादी का रूप ग्रहण कर लिया। ज्वर का ताप प्रातः अधिक बढ़ जाता और उसकी गर्मी से अंट-संट बकने लगती। यद्यपि शहर के एक प्रसिद्ध डाक्टर की दवा हो रही थी पर हालत में उतना सुधार होता दिखलाई नहीं दे रहा था। उमा की इस दशा को देख घर के सभी लोग मय नौकर-चाकर के दुःखी हो रहे थे। उस दिन जब नीरजा भी उसे देखने आई तो ज्वर की भयंकरता से घबड़ाकर उसे देखने के लिए अब नित्य ही उसके बँगले पर आने लगी। वह प्रातः ही आ जाती और शाम तक बराबर उसके पास में बनी रहती। कभी-कभी जब उमा की बेचैनी अधिक बढ़ जाती तो उसे पूरी रात भी वहीं उमा के पास ही बैठे बैठे बिता देना पड़ता। उस समय वह सफल गृहिणी के समान घर के सारे कारोबार को उमा सदृश ही देखने लगी। बच्चों को खाने पीने का प्रबन्ध ठीक-ठीक से कर

करा और उन्हें खिला-पिला ठीक समय पर स्कूल भेजवा देती। निर्मल के भी चाय-पानी का उसी तरह प्रबन्ध किये रहती जैसे उमा करती थी। नौकरों के साथ भी उसका व्यवहार प्रेमवत् ही रहा। इसके अतिरिक्त वह उमा के दवा-दारू का प्रबन्ध भी स्वयं अपने हाथों ही करती।

उमा की तबियत जब कभी कुछ अच्छी रहती तो वह उसके इस प्रकार दिन-रात खटते रहने के लिए मना करती और कहती बहन आप क्यों इतनी परेशान हो रही हैं, घर में तमाम नौकर-चाकर भरे पड़े हैं उन्हें ही सब काम-धाम करने दीजिये और आप यहीं हमारे पास बैठी रहें। जो कुछ करना-कराना हो नौकरों को बुलाकर यहीं से आदेश देती रहें। हाँ! इस बात का ध्यान अवश्य रखना है कि बाबूजी (निर्मल) को कोई तकलीफ न पड़े। उनके चाय-पानी तथा खाने-पीने का प्रबन्ध यदि हो सके तो जाकर देख लिया करिये। उमा निर्मल को अब भी बाबूजी ही कहा करती है।

उमा द्वारा उस प्रकार कहे जाने पर नीरजा अब निःसंकोच निर्मल के सामने आने-जाने लगी। चाय का सेट नौकरों से न भेजवा कर स्वयं ही लाकर निर्मल के टेबुल पर रख देती, और जब तक वह पी न लेते चुपचाप वहीं खड़ी रहती। नीरजा का इस प्रकार निर्मल के जीवन में प्रवेश पाना उसके लिए एक गूढ़ पहेली बन रही थी। वह कभी-कभी एकान्त पा घण्टों इस विषय पर सोचा करता, और अपनी उस चंचलता पर काबू पाने का प्रयास करता। उन दिनों जब वह सत्संग में प्रवचन आदि करता तो न जाने क्यों उसे ही उस पर विश्वास न होता।

निर्मल ने जैसा आकर्षण और यौवन का पूर्ण विकास नीरजा में देखा वैसा अब तक उसे कहीं किसी भी स्त्री में देखने को न मिला था और इसी लिए वह नीरजा की ओर बरबस ही खिंचने लगा था। यद्यपि उमा भी नीरजा से किसी भी माने में कम सुन्दर न थी पर उसका यौवन और रूप लज्जा के अवगुण्ठन में ढका, वासनाजनित चंचलता से उन्मुक्त ऐसा पवित्र और निर्मल-प्रवाह था जिसके दर्शन-मात्र से ही उसके प्रति श्रद्धा जागरुक हो उठती थी।

निर्मल जब कभी भी उमा को देखने आता वह बहुत देर तक उमा की आँख बचाकर नीरजा के उस प्रस्फुटित यौवन के रूप माधुर्य को देख लेता और जब मन की गति अधिक चंचल हो जाती तो बिना कुछ कहे उठ कर अपने ड्राइंग रूम में जा, साधना की कोई न कोई पुस्तक लेकर पढ़ने लगता तथा मन के उस उद्वेग पर काबू पाने का भरसक प्रयास करता।

इधर नीरजा के मन की गति भी निर्मल को इस प्रकार पा चंचल हो उठी। वह उसके उस स्वस्थ सौंदर्य पर मुग्ध हो उठी। पर अपनी उस चंचलता को वह स्त्रियोजनित लज्जा के प्रबल बाँध से कस कर ऐसे बाँधे रही कि किंचित मात्र भी उसका आभास निर्मल को न होने पाया। अपनी उस चंचलता को छिपाने के लिए सेवा में अपने को इतना तन्मय कर दिया कि उसे उस विषय पर सोचने-सोचाने का जैसे प्रश्न ही मिट गया। नीरजा की इस अथक सेवा से उमा के स्वास्थ्य में अब धीरे-धीरे कुछ परिवर्तन भी होने लगा और बुखार के चढ़ने उतरने का उद्वेग भी कम हो गया, जिससे शरीर का तापमान अब एक-सा रहने लगा। अब उमा को स्वयं भी उसकी तबियत भली-चंगी मालूम पड़ने लगी है जिससे वह नीरजा से रात में विविध प्रश्नों को लेकर बहुत देर तक बातें भी कर लेती। उस दिन भी जब उसे इसी तरह किसी प्रसंग पर बात करते-करते रात अधिक बीत गई और नीरजा द्वारा उसको कई एक बातों का जब ठीक-ठीक से उत्तर न मिला तो उमा समझ गई कि अब सोना चाहती है। उस समय उसे नीरजा को इस प्रकार रात में अधिक देर तक जगाये रहना कुछ बुरा-सा लगने लगा और इसके लिए उसने क्षमा-प्रार्थना करते हुए कहा "अच्छा बहन सो जाओ! मैंने अकारण ही आपको इतना अधिक कष्ट दिया।" और करवट बदल कर सोने का बहाना करने लगी। पर नीरजा ने उसकी इन बातों का भी कोई उत्तर न दिया इसलिए कि इसके बहुत पूर्व ही वह खर्राटे भरने लगी थी।

पचीसवाँ

नीरजा जब से अदालत में बयान देकर आयी है तब से न जाने क्यों उदास और खिन्न रहती है। वह हर समय कुछ न कुछ सोचा करती है। उसका अपना वह घर स्वयं ही उसे डरावना लगने लगा है, जिसमें एक क्षण के लिए भी रहना अब उसे अच्छा न लगता। उसने अपना बनाव शृङ्गार करना भी बहुत कम कर दिया है यद्यपि उसके यहाँ व्यक्तियों का आना जाना बहुत पहले से ही कम हो गया था पर अब से उसने नृत्य आदि में सम्मिलित होना भी बन्द कर दिया है, जिससे उसके जीवन में एकाकीपन और नीरसता आने लगी है।

एक दिन जब वह यों ही उदास चित्त अपने ड्राइङ्ग रूम में बैठी थी तो देखा साहब धीरे,धीरे दबे पाँव अगल-बगल झाँकके उसके कमरे में प्रवेश कर रहे हैं। नीरजा ने उठकर उनका उसी तरह स्वागत किया जैसे वह पहले करती आई थी। साहब उसके इस व्यवहार से लज्जित हो उठे और चुपचाप आकर एक कुर्सी पर बैठ गये। नीरजा ने नीरवता को भंग करते हुए पूछा "कहिये साहब मुकदमे में क्या हो रहा है?" मुकदमें का नाम नीरजा के मुख से सुनकर न जाने क्यों उस दिन साहब को एक चोट सी लगी। वे उस समय नीरजा से उस प्रसंग पर कोई बातचीत करना नहीं चाहते थे पर उसके द्वारा इस प्रकार प्रसंग उठाये जाने पर साहब को कुछ न कुछ कहना ही पड़ा और खिन्न मन से उन्होंने इतना भर कहा "फाँसी के अतिरिक्त और क्या हो सकता है।"

साहब के मुख से फाँसी का नाम सुनते ही नीरजा न जाने क्यों तिल मिला उठी। उसका रोम-रोम कँप उठा। उसकी वह करुणा आज कठोरता में बदल गई। वह उस संहार को सृजन में बदलने के लिए आकुल हो उठी और आँख उठाकर साहब के मुख की ओर देखा जिनकी मुखाकृति क्षण-क्षण बन-बिगड़ रही थी जिसमें कुछ न कुछ परिवर्तन अवश्य छिपा रहता। उस समय उसने उनके नेत्रों में बरबस ही आँसू को छलछलाते हुए देखा। बस जाग उठा उसमें नारीत्व का अभिमान और अपने संचित किये हुए धन-धान्य का गर्व। उसने धीरे से साहब को अपने साथ आने को कहा और वे चुपचाप उसके पीछे हो लिए। नीरजा लगातार कई कमरों को पार करती हुई एक ऐसे कमरे में पहुची जहाँ एक ताले पर एक बड़ा सा दीपक रक्खा हुआ था। उसने दीपक को जलाया और उसे लेकर धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतरने लगी। साहब भी नीरजा के साथ उन सीढ़ियों को पार करने लगे। कई एक सीढ़ियों को पार करने के बाद वह एक ऐसे कमरे में पहुँची जहाँ पर एक बहुत बड़ा ताला लटक रहा था। नीरजा ने उसे खोला और उस कमरे में बन्द एक पुरानी आलमारी खोला फिर उसमें से एक ताली निकाल उसे पुनः पूर्ववत् बन्दकर आगे बढ़ी और एक ऐसे स्थान पर पहुँची जहाँ एक बड़ा-सा पत्थर रखा हुआ था। उसने धीरे से उस पत्थर को स्पर्श किया जो उसके स्पर्श मात्र से ही हटकर एक किनारे पर हो गया। उस पत्थर के हटते ही उसे पुनः कई घुमावदार सीढ़ियाँ दिखलाई पड़ीं जहाँ से चलकर वह एक ऐसे गोल कमरे में पहुँची जो केवल लोहे और लकड़ियों की सहायता से बना हुआ था। उसमें कई-एक लोहे की तिजोरियाँ रखी हुई थीं। नीरजा ने दीपक के मधुर प्रकाश में उस तिजोरी को खोला और साहब को सम्बोधित करते हुए कहा "यह सभी धन आपकी ही सेवा के लिए संचित है। आप विश्वास रखिये कि संसार की कोई भी शक्ति आपको फाँसी के तख्ते पर नहीं झुला सकती।" और गम्भीर हो गई। साहब ने दीपक के प्रकाश में उस अपार द्रव्य को देखा जो हीरे-मोती तथा सोने-चाँदी की बड़ी-बड़ी सिल्लियों से जगमगा

रहा था। उनकी आँखें उसकी चकाचौंध से चौंधिया उठीं। वे क्षण भर के लिए अपनी आँखें बन्द कर लिए। उस समय उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा जैसे वे कोई स्वप्न देख रहे हों जो देवलोक की किसी अप्सरा की सहायता से कुबेर के धन-धान्य पूर्ण भण्डार को देखने के लिए यहाँ तक प्रछन्न रूप से लाये गये हैं। कुछ देर बाद उन्होंने अपनी दृष्टि उक्त द्रव्य से हटा लिया और पास में खड़ी उस नीरजा की ओर देखा जो उनकी उस अवाक् दशा को देख धीरे-धीरे मुस्करा रही थी। वे पागल की भाँति नीरजा के चरणों में लोटना चाहे पर नीरजा ने उन्हें बीच में ही उठाते हुए "कहा घबड़ाइये नहीं। उठिये! आप पुरुष हैं जब कि परिस्थिति स्वयं दासी बनकर उसका चरण चूमती है। पुरुष को नहीं, पुरुष ही उसे बनाता है। वह स्वयं ही परिवर्तन है, सृष्टि और सृजन है यदि वह अपने को पहिचाने? अपने भीतर सोई हुई उस अपार शक्ति को जान पाये? तथा कर्तव्य के महान् बन्धन में उसे अच्छी तरह से बाँध पाये तो वह सचमुच ही राम और कृष्ण है। बुद्ध और मसीह है। जिन्होंने संसार को मनुष्यों के रहने योग्य बनाया और मानव को पूर्ण मानव। "वसुधैव कुटुम्बकम्" और "सत्यं शिवं सुन्दरम्" का मनोहर पाठ पढ़ा और उसे अनुप्राणित किया।" कह कर नीरजा गम्भीर हो गई। उस समय साहब एकटक नीरजा के उस चन्द्रवत् मुख की ओर चक्रवाक की भाँति देखने लगे और पागल की तरह स्वतः बड़बड़ा उठे "नीरजे! तुम देवी हो, और कोई स्वर्गीय देवी जो केवल श्रद्धा और पूजा के लिए ही इस पृथ्वी पर अवतरित हुई है, न कि भोग के लिए, और बरबस ही उनके दोनों हाथ जुड़ गये। उस समय नीरजा मुस्करा रही थी और साहब के दोनों नेत्र बन्द थे।

—※—

छब्बीसवाँ

आज साहब के मुकदमे का फैसला था। उनके विरोधी ठीकेदार तथा अन्य कर्मचारी गण न्यायालय में बहुत पहले से ही आकर डट गये थे। साहब भी अपने वकील के साथ ठीक समय पर आ पहुँचे। साहब को देखते ही उन सबों ने एक ठहाका मारा पर साहब उनकी ओर न देख सीधे कमरे में चले गये और अपने वकील के साथ एक बेंच पर बैठ गये।

नित्य की भाँति आज भी पुकार हुई और नीरजा तथा अन्य पुलिस अधिकारी एक-एक कर उपस्थित हो गये। उस समय न्यायाधीश ने साहब को दोषी सिद्ध करते हुए "फाँसी" का फैसला सुना दिया। पहले से ही तैनात पुलिस ने उनके पैरों में "बेड़ी" डाल दिया। उस समय साहब ने अपने उन उपस्थित प्रतिद्वन्दियों पर एक विहंगम दृष्टि डाली और उनको अन्तिम नमस्कार करते हुए कहा "भाइयो आपलोगों ने जैसा चाहा वैसा ही हुआ, मैं अपने किये का फल पा गया। आज इस मृत्युदण्ड को पाकर मैं न तो भयभीत हूँ और न दुःखी ही। इस-लिए कि मैंने अपने अधिकार-काल में कितने ही निरीह और भोले-भाले युवकों को नौकरी से झूठा-झूठा दोष लगा कर अलग कर दिया। उन्हें जगह-जगह की धूल फाँकने के लिये बाध्य किया तथा उनके दुधमुँहे बच्चों को भूख से तड़फड़ाते देख दुर्दान्त दानव की भाँति अधिकार गर्व से फूल हँसता रहा। कितने ही ठीकेदारों को "ब्लैक लिस्टेड" करा उनकी रोजी को छीन आनन्द का अनुभव किया। उफ! आज वे सभी दृश्य एक-एक कर मेरे सामने साकार होकर मेरा उपहास कर रहे हैं अतः

भाइयों ! अब आप इस दुर्दान्त दानव को क्षमा करें" यही मेरी अन्तिम प्रार्थना है । प्रतिहन्दियों ने साहब के इस करुणापूर्ण भाषण को सुना, उनका हृदय पसीज उठा उनकी प्रतिशोधात्मक विचारधारा बदल कर दया और करुणा में परिवर्तित हो गई। वे उस समय साहब के उन किये हुये विगत कार्यों को भूल से गये उन्हें अपने ऊपर स्वयं ही क्षोभ हो उठा। उस समय उन्होंने अपने को टटोला फिर साहब की ओर देख यह सोच विचारमग्न हो गये कि "साहब के पतन का कारण यद्यपि उनका अमानुषिक व्यवहार ही रहा है पर वे लोग भी उसके उपकरण बने हैं और उसमें सहायक हुए हैं" फिर साहब ने नीरजा की ओर मुड़ कर देखा। उसे देखते ही उनकी आँखें डबडबा आईं, गला भर आया और वाणी मूक हो गई। पर साहस करके कुछ एक शब्द कहा ही "नीरजे ! तुम ऐसी महान देवी की भी मैं हत्या करने में न डरा। अतः मुझे क्षमा करना और कभी-कभी अपना हत्यारा समझ याद भर कर लेना" कहते-कहते गला फिर भर आया, वाणी पूर्ववत् मूक हो गई और आँखों से अश्रु प्रवाह होने लगा। नीरजा ने साहब की उस समय जैसी दशा देखी उससे उस समय उसकी स्त्रियोचित करुणा-जनित ममता, त्याग और दया एक ही साथ जाग उठी। उसे उस दिन की घटना याद हो आई जब कि उसने अपने उस अतुल धन को दिखलाते हुये साहब से कहा था कि "घबड़ाइये नहीं, आपको संसार की कोई शक्ति फाँसी के तख्ते पर नहीं लटका सकती और आपके बचाने में यह संचित धन उसी तरह बहा दिया जायगा जिस तरह स्नान करने के उपरान्त उसका अवशेष दूषित और मैला जल निरर्थक समझ कर फेंक दिया जाता है" सोचते ही नीरजा की एक आँख में आँसू और दूसरी में क्रोध साथ-साथ भर आया।

साहब जेल के लिए पुलिस के साथ मोटर में बैठ चुके थे पर उनकी आँखें अब भी नीरजा की ओर ही लगी थीं जिनसे लगातार आँसू बह रहा था। उस समय साहब ने जिस प्रकार नीरजा को अन्तिम नमस्कार

किया उसे देख उसका कलेजा फटा जाने लगा। उसने उनकी ओर देखना बन्द कर दिया और दोनों हाथों से अपनी आँखें बन्द कर फबक पड़ी पर पुनः अपने को सँभालते हुए उस सिंहनी की भाँति क्रोधातुर हो उठी जिसका शिकार सामने से ही कोई दूसरा हठात् छीन कर लिये जाता हो और उसी क्रोधावेश में उसने जाकर हाईकोर्ट के प्रमुख बैरिस्टर डा० वीरेन्द्र प्रताप से अपील के निमित्त बीस हजार का ठेका करा लिया।

—:※:—

सत्ताइसवाँ

उमा की तबीयत आज काफी अच्छी रही जिससे नीरजा को रात में कई बार उसे देखने के लिये उठना न पड़ा। वह कितने ही दिन बाद आज रात भर शान्तिपूर्वक सो पाई है और इतनी देर तक सोती रही कि सूर्य-भवगान् की बाल-रश्मियाँ खिड़की की राह आ उसके उन गुलाबी गालों पर नृत्य करने लगीं। पर उसे जैसे इसका भान ही न हो पाया। उस समय तक निर्मल भी प्रातःपरिभ्रमण से लौट कर आ चुके थे और नित्य की भाँति जब वे उमा का हाल-चाल पूछने उसके कमरे में प्रवेश किये तो देखा कि शान्तिपूर्वक अब भी दोनों सोई हैं पर उस सुषुप्ता-अवस्था में उनके शरीर की साड़ियाँ अस्त-व्यस्त हो इधर-उधर गिरी पड़ी हैं पर नीरजा की उमा से भी अधिक। इसलिये कि उमा के शरीर पर पड़ी हुई रेशमी चद्दर उसकी लज्जा को अब तक बचाये थी। उस समय निर्मल ने देखा कि नीरजा की चोलियाँ रात भर उसके उरोजों का अत्यधिक रस पान कर मदमस्त हो स्वतः खुल गई हैं और उन उरोजों

पर सर से छूट कर वेणियाँ नागिन-सी जिस प्रकार उसके चन्द्रवत मुख को पार कर लपटी पड़ी हैं देख निर्मल का रोम-रोम काँप उठा। वे कामदेव के उस प्रबल और तीखे बाण से आहत हो महादेव जी की भाँति उद्विग्न और व्याकुल हो उठे। और उक्त स्थान पर अधिक देर तक खड़े न रह सके। पागल की भाँति कमरे से निकल अपने "ड्राइंग रूम" में आ एक कुर्सी पर बैठ गये। उन्हें उस अनिन्द्य सौन्दर्य पान की प्रबल पिपासा कँपाने लगी वे उसकी पृथुल थपेड़ों की चोट सहने में असमर्थ होने लगे और उठ कर दबे पाँव चोर की भाँति आ नीरजा को देखने के लिये ज्यों ही कमरे में झाँका तो देखा कि उमा उठ कर अपने अस्त-व्यस्त वस्त्रों को सँभाल रही है और नीरजा उठने के लिये अँगड़ाई ले रही है उसकी उस मनहर अगड़ाई ने पुनः उन्हें मर्माहित कर दिया और वे उसकी चोट से आहत होकर सीधे अपने कमरे में आ एक चार-पाई पर लेट गये तथा करवटें पर करवटें बदलने लगे। उन्हें ऐसा मालूम हो रहा था जैसे हजारों बिच्छू ने एक साथ ही उनके सारे शरीर में डंक मार दिया हो और वे उसकी असह्य पीड़ा को सह सकने में असमर्थ बन म्रियमाण-सा छटपटा रहे हों। पास में रखी टेबुल पर की साधन-पुस्तिका आज जैसे उन्हें नीरस-सी प्रतीत होने लगी। वे उस कामोत्पीड़न पिपासा को मिटाने के लिये उसे उठाकर पढ़ना अवश्य चाहे पर उसमें उनका जो न लगा। जैसे पानी की गति नीचे को बहती है, पवन की गति टेढ़ी-मेढ़ी और चंचल रहती है उसी तरह इस इन्द्रिय की गति भी आत्मा की ओर न जाकर भोगों की ओर उन्मुख बनी रहती है। जिस प्रकार एक हाथी नकली हथिनी के चक्कर में पड़ कामदेव के बाणों से आहत हो गढ़े में गिर अपने को विनष्ट कर देता है, जैसे पतंग आत्मसुख की इच्छा से दीपक पर जल अपने प्राणों को होम कर देता है ठीक वही गति आज निर्मल की भी हो रही थी। वह अपना पतन आज स्वयं ही करना चाहते थे और इसी में उन्हें सुख और शान्ति झलकती थी। अपनी इस दुर्बलता को वह आज नीरजा पर प्रकट कर

देना चाहते थे तब तक नौकर ने चाय का "सेट" लाकर उनके टेबुल पर रख दिया। पर उसकी पिपासित आँखें तो नीरजा को देखने के लिये आकुल थीं। नौकर द्वारा इस प्रकार चाय का लाया जाना देख उनके हृदय को एक चोट लगी, एक गहरा धक्का लगा। उनका माथा ठनका और उन्हें मालूम होने लगा जैसे उनकी उस दुर्बलता को नीरजा ने जान लिया है और वह उनसे अब घृणा करने लगी है जिससे उसने आज स्वयं न चाय लाकर नौकर से भेज दिया है। सोचते ही उनका विचार बदला। उन्हें अपनी सती साध्वी पत्नी का ध्यान हो आया। उसका ध्यान आते ही जैसे उनका पिछला जीवन साकार हो कर सामने नृत्य करने लगा। और अपने ऊपर स्वयं घृणा होने लगी। चाय की सुरकी लेते हुए वह एकाएक विचारमग्न हो गये। तब तक चपरासी ने आकर सलाम किया। निर्मल का ध्यान टूटा, और पूछा "क्या है?"

श्रीमान् जी एक बाबाजी द्वार पर खड़े हैं और अपने को कृष्णपुर से आया हुआ बतलाते हैं" सुनना न था कि निर्मल के बदन में जैसे बिजली के करेंट ने छू दिया हो और वे चाय का प्याला वहीं फेंक अपने उसी प्रातःकालीन वेश में दौड़ पड़े। देखा तो बाबा राघवदास द्वार पर खड़े-खड़े मुस्करा रहे हैं।

—०—

अठाइसवाँ

यद्यपि साहब को जेल में प्रथम श्रेणी में ही रखा गया और उनके साथ जेल के अन्य कैदियों की भाँति व्यवहार नहीं हुआ फिर भी उनका स्वास्थ्य दिनों दिन गिरता ही गया। "एक तो करेला कड़ुवा दूसरे नीम चढ़ा" वाली कहावत चरितार्थ होने लगी। एक तो वे पहले से इतने

दुबले पतले और सिकिया पहलवान थे दूसरे जेल ने उनके स्वास्थ्य में और भी गजब का परिवर्तन ला दिया है। उन्हें अब हल्का हल्का बुखार आने लगा है और साथ ही खुशखुशी खांसी भी। दिन में तो खाँसी का उतना अधिक प्रकोप नहीं रहता पर रात में वह इतनी अधिक बढ़ जाती कि सारी रात बैठे ही बिता देनी पड़ती। शाम को जब कभी भी चावल या अन्य कोई ठण्डी वस्तु खा लेते तो खाँसते खाँसते कै हो जाती जिसके साथ खायी हुई सारी वस्तु पेट से बाहर निकल जाती। इसी डर से रात में बहुत हल्का केवल एक या दो फोलका ही खाकर रह जाते। जिससे उनका स्वास्थ्य दिनों दिन और भी गिरता गया। यद्यपि नीरजा प्रत्येक रविवार को उनसे अवश्य भेंट करती, और खाने पीने के लियें जितना भी फल फूल हफ्ते भर के लिये सम्भव हो सकता था दे जाती तथा तरह-तरह से समझा-बुझा और सान्त्वना दे दृढ़ बने रहने के लिये अनुरोध कर जाती। पर साहब पर जैसे उसकी इन बातों का कोई असर ही न होता। नीरजा को देखते ही उनकी आँखों में आँसू छलछला आते और वह जब तक उनके पास बनी रहती मूकवत् आँखों से आंसू बहाया करते जिसे देख नीरजा घबड़ा कर जल्दी ही उनके पास से उठकर चली जाती और वे चारपाई पर चुपचाप लेट जाते। नीरजा द्वारा लाया हुआ वह फल-फूल ज्यों का त्यों रखा रह जाता और जब उसमें सड़न आने लगतो तो उसे उठाकर अन्य कैदियों में वितरित कर देते।

कभी-कभी उन्हें मालूम होता जैसे उनका जीवन एक जागृत स्वप्न है और दुनिया के ये सारे कार्य-कलाप उन्हीं स्वप्न के समान ही नश्वर और असत्य हैं। फिर उन्हें नीरजा का ध्यान हो आता और वे उसकी इस प्रकार की निःस्वार्थ सेवा और त्याग को देख प्रेम विह्वल हो सोचने लगते "हा नीरजे! तुमने व्यर्थ ही मुझ ऐसे पापी और अधम व्यक्ति को बचाने के लिये हाई कोर्ट में अपील कर दिया, व्यर्थ ही अपने रुपयों को इस तरह पानी की भांति बहाया और मेरे जीवित बने रहने के लिए व्यर्थ ही इन फल फूलों का ढेर लगाया। उफ! तुम्हारे इन आभारों का बदला क्या मैं

इस जीवन में चुका पाऊँगा और स्वतः बड़ा बड़ा उठते, नहीं ! कभी नहीं इस जीवन में क्या कई जन्मों में भी नहीं चुका सकता। उफ तुम देवी हो, नारी हो और एक पूर्ण भारतीय नारी जो के श्रद्धा और विश्वास की मंजूसा से ही पूजित होती है और पागल की भांति उठकर टहलने लगते। पर उनकी विचारधारा पुनः बदलने लगती, उन्हें नीरजा पर क्रोध आने लगता और उसी क्रोधावेश में सोचने लगते "जाने भी दो नीरजा को उनकी कौन ठहरी जो इस प्रकार हर समय उसके ही विषय में सोचता रहता है। वही तो उसके इस पतन की उपकरण बनी। उसी ने तो उसके जीवन को इतना नारकीय और घृणित बनाया" फिर अपने ऊपर क्रोध हो आता और घबड़ाकर पत्रिका उठाकर पढ़ने लगते पर उसमें भी जी न लगता और उसे ज्यों का त्यों टेबुल पर रख देते फिर एक गहरी चिन्ता में निमग्न हो उठकर टहलने लगते "यदि हाई कोर्ट ने भी वही फैसला बहाल रक्खा जो छोटी अदालत ने किया था तो···तो···नीरजा का क्या होगा··· उफ ! उफ !···अरे वह नीरजा को लेकर पागल तो नहीं बन जायगा ! ऊँहूँ ! जाने दो उस नीरजा को। वह उसके विषय में इतना सोचता ही क्यों है और उसके लिये क्यों इतना पागल बना हुआ है। नहीं ! नहीं ! नीरजा उसकी है और उसका जन्म भी उसी के लिये हुआ है। माना कि वह उसकी कोई नहीं तो वह इस प्रकार उसके जीवन में आई ही क्यों और पुनः चिन्तामग्न हो पड़ी हुई चारपाई पर आकर सो गये, और टेबुल पर का रखा हुआ भोजन ज्यों का त्यों पड़ा रह गया।

——

उनतीसवां

उमा को ज्वर का आना अब बिलकुल बन्द हो गया। जिससे उसका स्वास्थ्य थोड़े ही दिन में पूर्ववत् हो गया। उसकी बीमारी में नीरजा ने जिस प्रकार उसकी सेवा की उससे उसका नीरजा के प्रति प्रेम अत्यन्त अगाढ़ तथा स्वाभाविक हो गया। वह उसे सममुच ही अपनी एक अभिन्न सहेली तथा सगी बहन से भी बढ़ कर समझने लगी। जब कभी भी नीरजा अपने घर चली जाती तो उमा को उसकी अनुपस्थिति खलने लगती और वह तुरत ही अपना कोई नौकर भेज उसे बुलवा भेजती। नीरजा भी उसके इस प्रकार बार-बार बुलाते रहने में कुछ बुरा नहीं मानती। इस-लिए कि उसने भी उमा के यहाँ आने जाने के अतिरिक्त अन्य दूसरी जगहों का आना जाना बिलकुल बन्द सा कर दिया था। सभा सोसाइ-टियों में जाकर नृत्य करना तो उसने बहुत पहले से ही बन्द कर दिया था जिसका फल यह हुआ कि नवागन्तुक मनचले शोहदों का उसके कोठी पर आने जाने का साहस ही जाता रहा यदि कोई भूल वश आ भी जाता तो उसे ऐसी फटकार सुनाती कि जीवन की काया-पलट ही हो जाती। इन सब परिस्थितियों ने उसके जीवन में बहुत कुछ एकाकीपन ला दिया जिससे उसे गहन चिन्ता ने आ घेरा अतः अब फलतः नीरजा को अपना वह अनिन्द्य सौंदर्य एक खिलवाड़-सा प्रतीत होने लगा। किसी भी अन्य पुरुष से बोलना, उसकी ओर मदमस्त चितवन से देखना उसे बुरा लगने लगा। जहाँ तक वह सोचती कि उनकी छाया भी उसपर न पड़ने पावे। इसका यह मतलब नहीं था कि उसे पुरुष समाज से घृणा हो गई बल्कि

उसे केवल उसके कुत्सित विचार और अनैतिकता से ही घृणा थी जिसमें पुरुष का दम्भ और पाखण्ड तथा उसकी असंयत मनः प्रवृत्ति ही झलकती है। उसके इस प्रकार के मानसिक परिवर्तन की उमा ही कारण बनी। जिसका सुखी और दाम्पत्य जीवन उसे अपने विगत जीवन की झाँकी कराने लगा जिसके लिए वह कभी-कभी इतनी बेचैन और अधीर हो उठती कि उससे त्राण पाने के लिए तुरत ही वह उमा के यहाँ बिना उसके बुलाये ही जा पहुँचती और उससे घुलमिल कर तब तक बातें करती रहती जब तक कि उसके हृदय का भार हलका न हो जाता।

नीरजा ने अब अपनी कोठी में एक तरह से ताला ही मार दिया था। पत्र-पत्रादि जो बाहर से कभी आते भी उसके लिए उसने डाकवाले को अपना नया पता द्वारा "उमा देवी, बंगला नं० ६ जवाहर रोड" लिखा दिया था। जिससे वे उसके सारे पत्रादि उसी उमा के ही बँगले पर दे आते थे।

उस दिन भी जब उमा और नीरजा बैठकर किसी प्रसंग पर बातचीत कर रहीं थीं तो डाकवाले ने एक पत्र लाकर नीरजा के सामने टेबुल पर रख दिया। पत्र को देखते ही नीरजा ने अधीरता से उठा कर खोला और एक ही निगाह में सारे पत्र को पढ़ डाला। पत्र डा० वीरेन्द्रप्रताप बैरिस्टर द्वारा लिखा गया था जिसमें "उसके द्वारा की गई अपील का अनुमोदन और फैसले का दिन उल्लेखनीय था। उक्त पत्र द्वारा उसे उस दिन उपस्थित रहने का सुझाव दिया गया था और यह बताया गया था कि उसके मुकदमें का फैसला सर्वप्रिय न्यायाधीश श्री निर्मल के इजलास द्वारा होगा" पढ़ कर नीरजा का हृदय भय-मिश्रित प्रसन्नता से एक बार खिल उठा। भय इसलिए कि कदाचित् छोटी अदालत का ही फैसला बहाल रहे और प्रसन्नता इसलिए थी कि न्यायाधीश उसके परिचितों में से थे। और यही बात सोचकर उसने एक अर्थ पूर्ण दृष्टि उमा पर डाली। पर न जाने क्यों वह अधिक देर तक उसकी ओर न देख सकी और शीघ्र ही अपनी आँखें

उसी पत्र में पुनः गड़ा लीं। उस समय वह उक्त पत्र उमा को दिखलाना तो अवश्य चाहती थी पर न जाने क्यों उसका हाथ ही इसके लिए नहीं उठता था। उसकी गति साँप-छछुन्दर की सी हो रही थी। वह बार बार उमा की ओर देखती और पुनः अपनी आँखें पत्र में गड़ा लेती। उमा ने उसकी इस चंचलता को देखा और पत्र को तुरत ही उसके हाथों से खींच लिया तथा आद्योपान्त पत्र को बड़ी गम्भीरता से पढ़ डाला। पत्र को पढ़ते ही उमा को नीरजा और साहब के सम्बन्ध में जानने की जिज्ञासा प्रबल हो उठी। इसलिए कि अब उमा और नीरजा में एक दूसरे से किसी भी प्रकार का दुराव या प्रार्थक्य नहीं रह गया था। दोनों एक दूसरे के अत्यन्त निकट आ चुकी थीं। इतनी घनिष्ठता होते हुए भी नीरजा ने अब तक अपना और साहब का सम्बन्ध उमा से नहीं बतलाया था। अतः उसने नीरजा पर व्यंग कसते हुए हँस कर उक्त सम्बन्ध के विषय में पूछा। पहले तो नीरजा ने इधर-उधर की बातें बता उक्त प्रसंग को टालना चाहा पर उमा ने बार-बार मजाक करते रहने और इस प्रकार का उससे दुराव करते रहने के उलाहने को सुनकर आद्योपान्त सारा किस्सा एक-एक कर उससे कह सुनाया कि किस प्रकार उक्त विभाग के कर्मचारी तथा ठीकेदार साहब के अत्याचार से पीड़ित होकर सहायतार्थ उनके पास याचना करने आये थे और किस प्रकार उनका तथा साहब का ठीके के दिन प्रथम परिचय हुआ जो बढ़ता-बढ़ता प्रगाढ़ प्रेम में परिवर्तित हो गया। फिर उसने "कार बिगड़ने और उसके द्वारा निर्मल से परिचय होने के विषय में भी बतलाया तथा उस दिन की घटना का भी हाल कहा जब वह १ बजे रात अपनी कार से उसे उसके घर तक पहुँचाने का कष्ट किया था। फिर उक्त साहब के निशाने से बाल-बाल बचने तथा नौकरानी के प्राणान्त के विषय में भी दर्द भरी कहानी कह सुनाया और साहब पर चलाये गये पुलिस के अभियोग तथा छोटी अदालत के उस फैसले का भी हाल कहा जिसके द्वारा साहब को फाँसी की सजा मिली थी। फिर अपनी अपील तथा साहब को उक्त अभियोग से मुक्त कराने में अपने प्रयास की ओर

संकेत किया। प्रगाढ़ प्रेम की इस प्रकार सारी घटना को सुनकर पहले तो उमा हँसी पर सहसा गम्भीर हो गई। उसे साहब के उस अत्याचार पूर्ण कार्यों पर घृणा हो आई और एक क्षण के लिए उसने उसी घृणा से तिलमिला कर अपनी दृष्टि नीरजा की ओर से हटा लिया। पर दूसरे ही क्षण यह सोचकर कि कहीं उसके इस उपेक्षा पूर्ण व्यवहार से नीरजा को कोई आत्मिक ठेस न पहुँचे। हँसते हुए पूछा "बहन! ऐसे हिंसक पशु से तुमसे किस प्रकार इतना प्रगाढ़ प्रेम हो गया जिसने तुम्हारी हत्या करने में भी जरा सा आगा-पीछा न सोचा। पर धन्य हो बहन! और धन्य है तुम्हारा निश्चल प्रेम जो इतना होने पर भी उसे बचाने के लिए तुमने इतनी दौड़-धूप किया। रुपये को पानी की तरह बहाया और अपील करने में एक मुस्त बीस हजार का ठोका करा लिया। इसे ही कहते हैं प्रेम, समर्पण और त्याग। जिसका पूर्ण विकास इस प्रकार मैंने तुमसे निखरा हुआ पाया" कहते कहते उमा किसी गम्भीर चिन्तना में निमग्न हो गई और नीरजा ने लज्जा से सर नीचा कर लिया। अपनी इस लज्जा को छिपाने के लिए वह टेबुल पर रक्खी हुई एक पत्रिका को उठाकर पढ़ने लगी। उस समय उमा ने नीरजा की ओर देखा तथा उसमें स्पष्ट रूप से झलकती हुई उस लज्जा-पूर्ण बेचैनी को भी देखा फिर उसी गम्भीर मुद्रा में बड़बड़ा उठी "बहन! घबराओ नहीं मैं तुम्हारे द्वारा किये गये उन सारे एहसानों का बदला कभी न कभी अवश्य चुकाऊँगी" और पुनः किसी विचारधारा में निमग्न हो गई। उसी समय निर्मल की कार फाटक के भीतर प्रवेश करती हुई दिखलाई पड़ी जिससे दोनों उठ कर अपने ड्राइंग रूम में चली गईं तथा नौकर ने टेबुल कुर्सी को उठाकर भीतर कर दिया।

तीसवाँ

निर्मल के मनमें नीरजा के प्रति उठी हुई कामुक भावना कतिपय कारणों से दब-सी गई थी पर मिटी नहीं थी। निर्मल इस बात को जानता था और अपनी इस दुर्बलता पर विजय पाने के लिए नीरजा के सम्मुख बहुत कम जाता था। नीरजा भी इस बात को अच्छी तरह जानती थी और यह भी जानती कि उसका इस प्रकार उसके घर में अकारण ही बना रहना दोनों के लिए कभी भी घातक सिद्ध हो सकता है और साथ ही बहन उमा के लिए भी। यही कारण था कि वह जब कभी निर्मल को देखती कोई न कोई बहाना या आवश्यक कार्य बतलाकर अपने भाग जाना चाहती। पर उमा हँस कर उसे रोक लेती और कहती "बहन तुम भी खूब हो, वहाँ अकेले जाकर क्या करोगी, आज यहीं न रुक जाओ, कल मैं भी आपके साथ ही आपके घर तक चलूँगी" नीरजा उसके इस आग्रह को न टाल सकती और उस दिन वहीं रुक जाती।

उस दिन जब निर्मल न्यायालय से आया, चाय पानी पी कुछ देर ही बैठा कि एकाएक उसकी इच्छा टहलने की पुनः जागरूक हो उठी। उसने नौकर को बुलाया और उमा को भी तैयार हो जाने के लिये कहकर ड्राइंग रूम में कपड़ा बदलने के लिए चला गया। कपड़ा बदल कर जब तक वह बाहर निकले उसके पूर्व ही उमा और नीरजा तैयार हो कर आ गईं। उन्हें इस प्रकार आया देख, निर्मल ने हँसते हुए कहा

"अरे आप लोग आ गई मैं तो समझा कि मैं ही सबसे पहले तैयार हो जाऊँगा पर आपलोगों ने तो बाजी मार लिया" और ठहाका मार कर सब एक साथ ही खिलखिला पड़े। फिर दोनों को साथ लिए निर्मल उसी कृष्णपुर की ओर छड़ी घुमाता चल दिया।

उमा की बीमारी के कारण निर्मल कितने ही दिनों बाद इस ओर आया है। यद्यपि बाबा राघवदास बीच-बीच में जाकर बनते हुए घाट और उसमें उत्साह पूर्वक हाथ बटाने वाले प्रत्येक सहयोगियों का विधि-पूर्वक वर्णन करते रहे जो निर्मल को सचमुच ही यहाँ उसी तरह देखने को मिला भी। उसे यह सब कुछ देख सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ और सबसे अधिक आश्चर्य बाबा राघवदास को देख कर हुआ जो अत्यन्त लगन के साथ प्रत्येक कार्य को देखते और मजदूरों तथा गाँव वालों को उत्साहित कर रहे थे। क्षण भर के लिए निर्मल वहीं रुक गये और बड़ी सूक्ष्मता से सब कुछ देखने लगे। तब तक बाबा राघवदास की निगाह एकाएक निर्मल की ओर उठ गई और वे उसी तरह गाँव वालों तथा मजदूरों को उत्साहपूर्वक काम पर लगे रहने की प्रेरणा दे निर्मल के पास आकर खड़े हो गये। सबों ने झुक कर चरणस्पर्श किया और बाबा जी यथायोग्य आशीर्वाद दे, सबके साथ उसी चबूतरे पर आकर बैठ गये।

बातचीत के प्रसंग में निर्मल ने बाबा राघवदास के उस कार्य की प्रशंसा करते हुए कहा "यद्यपि आप इतनी ही लगन और परिश्रम के साथ उस समय भी कार्य करते रहे और अपने दूसरे सहधर्मियों को भी उत्साहित करते रहे पर उसका परिणाम कुछ का कुछ हो गया" कह कर हँस दिया और बाबाजी भी हाथ मलते हुए हँसने लगे। फिर निर्मल का उत्तर देते हुए कहा "क्या कहें भगवान की यही इच्छा थी, नहीं तो उस दुर्दान्त दानव को प्रसन्न करने के लिए हम लोगों ने क्या नहीं किया। आप तो स्वयं देखते ही थे कि कभी-कभी हम लोग सारी की सारी रात जाग कर कार्य करते रहे फिर भी वह अलफ ही बना रहा।

उसने क्या आपकी कम दुर्गति की ?" और न जाने क्यों एकाएक गम्भीर हो गये उस समय अतीत का चलचित्र जैसे एक बार उनके सम्मुख पुनः नग्न-ताण्डव करने लगा। जिसे सोचते हुए वे बहुत देर तक उसी प्रवाह में बहते रहे। उस समय निर्मल भी सब कुछ सुनकर न जाने क्या सोचता रहा। उमा ने देखा विषय अच्छे समय और उसके मनोनुकूल छिड़ा हुआ है। उसने नीरजा को भी देखा जो किसी विचारधारा में लीन सिर नीचा किये हुए कुछ सोच रही थी। जिसे देखते ही वह समझ गई कि नीरजा इस समय अवश्य ही उसी साहब के विषय में उठे हुए प्रसंग पर सोच रही है। अतः मूकता को भंग करते हुए उसने कहा "सुनती हूँ उक्त साहब क छोटी अदालत ने किसी अभियोग में फाँसी की सजा सुना दी है। बेचारे का अपना कोई था नहीं जो उसे बचाने के लिये अपील भी करता। क्यों बहन नीरजा! क्या आपने उसी साहब को बचाने के लिये अपील कर रक्खी है! उस दिन जो डा० वीरेन्द्र प्रताप बैरिस्टर की चिट्ठी आई थी उसमें कदाचित् उसी साहब के विषय में तो लिखा था! है न यही बात!"। नीरजा उस समय प्रसंग को इस प्रकार उमा द्वारा उठाये हुए देखकर समझ गई कि वह अपरोक्ष रूप से इस समय उसकी कुछ न कुछ सहायता करना चाहती है। अतः विषय की उपयुक्तता पर विचार करते हुये इतना भर कहा "हाँ। उसी साहब के लिये तो" और फिर चुप हो गई। उमा ने मुस्कराते हुये निर्मल की ओर देख कर कहा "सुनती हूँ उसके जीवन के अन्तिम निर्णायक आप ही बनाये गये हैं" और निर्मल की स्मृति जैसे फिर से ताजी हो गई और हँसते हुए कहा हाँ! हाँ! ठीक कह रही हो। अमुक दिन उक्त मुकदमें में फैसला भी है। हाँ! सुनिये न बाबाजी उस जघन्य पशु का दानवी कर्तव्य और आदि से अन्त तक सारा किस्सा कह सुनाया। सुनते ही बाबा जी की आंखें क्रोध से लाल हो उठीं। अधर फड़कने लगे और नीरजा की ओर मुड़ कर कहा "धन्य हो देवी! अपने उस हत्यारे को बचाने के लिये जिस प्रकार

का त्याग और साहस दिखलाया है वह स्तुत्य है। आप जैसी नारियों की करुणामय सुरसरि का प्रवाह जब तक इस भूतल पर रहेगा तभी तक ऐसे बर्बर और उच्छृङ्खल सगर पुत्रों जैसे दुर्दान्त मानव का उद्धार भी सम्भव बना रहेगा। नारी सदैव ही पुरुष के लिए श्रद्धा और विश्वास की पात्र रही है। वह प्रथम मातृ रूप में पुरुष को मिली। फिर बहन के रूप में आ, भ्रातृत्व सा निश्छल अम्लान और शाश्वत नूतन स्नेह का सूत्रपात किया। वहीं पुनः धर्म पत्नी बनकर पुरुष की जिस प्रकार सेवा और उसके लिये त्याग तथा बलिदान जनित समर्पण दिखलाया वह पुरुष के लिये विचारणीय है। नारी के अपंकिल हृदय का वह स्तुत्य समर्पण पुरुष की शक्ति और उसके जीवन-पथ का सदा सम्बल बना है। उसी से उसको जीवन मिला है तथा शक्ति और प्रेरणा मिली है, स्फूर्ति और आलम्बन मिला है और इसीलिये वह पुरुष के लिये श्रद्धेय है, पूजित है और विश्वसनीय है। वह पुरुष को ढालती है, ढालना जानती है। उसे बनाना बिगाड़ना उसके हाथ का खेल है। जहाँ वात्सल्य, भ्रातृत्व और प्रगाढ़ प्रेम की सर्वदा पवित्र सरिता बहती है यह वही उद्गम है वही बहाव है और वही मृदुल थपेड़ा है जिसमें डुबकी लगाने से पुरुष धन्य हो उठता है। प्रकृति ने पुरुषों की अपेक्षा इन्हें तीन गुण अधिक दिया है वह है प्रेम, त्याग और लज्जा जो असली आभूषण और अलंकार है सौन्दर्य और आकर्षण है। पर आज की नारियां यदि अपने उस सत्य स्वरूप को पहचान पातीं! पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध में तितली न बन माता बनतीं, सती सीता और अनुसुइया बनतीं जिससे भारतीय संतानों को नैतिक बल मिलता और बिना इसके भारत का उत्थान सम्भव नहीं। जब तक इसका नैतिक उत्थान नहीं होगा, बांध बाँधने और पंचवर्षीय योजना चलाने से कुछ होना हवाना नहीं। भले ही कुछ समय के लिये वह भौतिक प्रगति कर जाय पर आगे चलकर उसकी वह प्रगति कुंठित और अवरुद्ध हो जायगी तथा उसका सारा किया कराया परिश्रम और धन, बांध टूटने के पहले ही बह कर व्यर्थ बन जायगा। उस समय

"बापू" के रामराज्य की कल्पना केवल कल्पना भर रह जायगी। तब हमारी इस असफलता पर आगे आनेवाली पीढ़िया हम पर हंसेंगी। धिक्कारेंगी और कोसेंगी उस समय हमारा यह नव निर्मित संविधान कागज को रद्दी टोकरियों में फेंक दिया जायगा। अतः सरकार को चाहिये, और उसमें आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को चाहिये कि वे तरह तरह की टोपियों और उसके वादों के चक्कर न पड़ सबसे पहले भारतीय बने, और इसी राष्ट्रीय भावना से अभिप्रेरित होकर सब एक साथ बैठ मेल से आधुनिक शिक्षा में आमूल परिवर्तन करें। स्कूलों और कालेजों के लिये नयें ढंग की पुस्तकों का निर्माण करें जिसमें भौतिकता की प्रगति के साथ ही साथ आध्यात्मिकता पर भी पूर्ण प्रकाश डाला गया हो। तब कहीं जाकर बापू की आन्तरिक इच्छा पूर्ण होगी और स्वर्ग में उनकी आत्मा को हमारी इस प्रगति से शान्ति मिलेगी। उस समय वे स्वर्ग से, हमारी बढ़ती हुई उस नैतिकता, अनुशासन-प्रियता संयम और सद्विचारों से प्रसन्न होकर हम पर फूल बरसायेंगे। कहते कहते बाबा राघवदास गम्भीर हो गये। समय अधिक हो गया था अतः निर्मल ने उठते हुए उस दिन के लिये क्षमा मांगी तथा अगले दिन दर्शन करने को कहकर चलना चाहा। पर चलते-चलते रुक कर बाबा जी से विनम्र वाणी में इतना फिर कहा- यदि आपको कोई विरोध न हो तो मैं साहब के फैसले के दिन आपको अपनी ओर से जूरी मनोनीत करना चाहूँगा क्या यह प्रस्ताव आपको स्वीकार होगा? बाबाजी कुछ देर तक मौन बने रहे फिर हंसते हुए कहा "आपका आग्रह न तो पहले कभी टाला और न तो अब भी टालना चाहूँगा जैसा आपकी इच्छा है वही करने का प्रयत्न करूंगा" और हँसकर चलने लगे। निर्मल ने भी उन्हें दण्डवत किया और उस दिन गुरुदेव को भी उक्त विशेष मुकदमें में जूरी बनाने के प्रश्न पर विचार करता उमा और नीरजा के साथ शनैः शनैः बढ़ते हुये उस घने अन्धकार को चीरता बंगले को लौट पड़ा।

—:o:—

इकतीसवाँ

सर्वप्रिय न्यायाधीश श्री निर्मल के न्याय-कक्ष के सामने आज अन्य दिनों की अपेक्षा कुछ चहल-पहल अधिक है। सभी मनोनीत जूरी निर्मल के आने के पहले ही आकर न्याय-कक्ष में विराजमान हैं। तब तक निर्मल की कार भी एक ओर से आकर न्यायकक्ष के सामने खड़ी हो गई। लोगों ने देखा कि निर्मल दो महिलाओं और दो वयोवृद्ध तथा परम तेजस्वी सन्तों के साथ उतर कर गम्भीर मुद्रा में अपने कक्ष की ओर बढ़ रहा है। आज इस प्रकार न्यायकक्ष में महिलाओं और सन्तों के साथ प्रवेश करते देख लोगों को आश्चर्य तथा कुतूहल एक ही साथ हुआ। चपरासी ने दौड़ कर कुर्सियाँ यथास्थान लगा दीं और निर्मल सबके साथ आकर बैठ गया।

चपरासी जब तक नित्य की भाँति आवाज लगाये, उसके पहले ही ख्यातिप्राप्त बैरिस्टर डा० वीरेन्द्रप्रताप तथा अभियुक्त साहब, कठघरे के भीतर खड़े हो चुके थे। उस समय सबको आया देख निर्मल ने जूरियों से एक-एक कर राय लेना प्रारम्भ किया। सबके बाद जब बाबा राघवदास का नम्बर आया तो उपस्थित जनता इस वयोवृद्ध तपस्वी को देख परस्पर काना-फूसी करने लगी। उस समय बाबा राघवदास ने गम्भीर मुद्रा में खड़े होकर निम्न प्रकार कहना प्रारम्भ किया।

"उपस्थित जूरियों तथा न्यायाधीश श्री निर्मल ! यह वही नर-पिशाच, दुर्दान्त, अत्याचारी, अधिकार मद में चूर्ण, हठी, क्रोधी, पदाधिकारी है जिसने निम्न वेतनभोगियों के साथ कभी भी मानवता का व्यवहार नहीं किया, जिसने कि निर्मल ऐसे मेधावी और कार्यकुशल युवक को आत्महत्या करने के लिए बाध्य किया तथा मुझ ऐसे प्रधान लिपिक को अपने अत्याचारपूर्ण कार्यों से विवश बना वैराग्य का बाना अपनाने को बाध्य किया। कितने ही ठेकेदारों तथा निरीह छोटे-छोटे कर्मचारियों

को बेरोजगार बना उन्हें तथा उनके दुधमुँहे बच्चों को भूख से तड़पते देख हँसता रहा। यह उसी नर-पिशाच का सबसे जघन्य कार्य है जिसने श्रीमती नीरजा ऐसी एक पूर्ण भारतीय महिला की हत्या करने की दुश्चेष्टा की। उफ ! इस अधिकारी के अत्याचारपूर्ण कार्यों को कहाँ तक गिनाऊँ" सुनते ही सब जूरियों के मुख से एकसाथ ही निकल पड़ा "फाँसी, फाँसी, ऐसे नर-पिशाच अधिकारी को अवश्य ही फाँसी दी जाय।" उस समय सारा कक्ष फांसी के शब्द से गूँज उठा और सब एक ही साथ क्रोधपूर्ण निगाहों से उस साहब की ओर देखने लगे। फिर निर्मल ने गम्भीर मुद्रा तथा विनम्र वाणी में गुरुदेव से कुछ कहने के लिए प्रार्थना की। पहले तो वे उसी तरह पूर्ववत अपने स्थान पर बैठे रहे जैसे उन्होंने निर्मल की उस प्रार्थना को सुना ही न हो पर न जाने क्यों फिर क्या सोचकर कहना प्रारम्भ किया "आज हम सब स्वतन्त्र हैं, हमारा अपना एक संविधान है जिसके द्वारा हम स्वतन्त्र होते हुए भी परस्पर एक दूसरे के साथ कर्तव्य बन्धन में बँधे हैं। यद्यपि हमें स्वतन्त्र रूपसे सोचने-विचारने और कहने सुनने का अधिकार प्राप्त है पर हमें उस प्राप्त अधिकार पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना है और उसके सदुपयोग में लाने का व्रत लेना है इसलिए कि उसका सदुपयोग ही सच्चा न्याय, धर्म और कर्तव्य है, सच्ची प्रतिष्ठा और सच्ची राष्ट्रीयता तथा विश्व बन्धुत्व है इसके प्रतिकूल उसका दुरुपयोग ही अत्याचार है, नृशंशता तथा उच्छृङ्खलता है, अराष्ट्रीयता तथा पतन है तथा मृत्यु और विनाश है और···और सभी कुछ····। इस समय हम सभी भौतिकता की चकाचौंध में गुमराह हो गये हैं जिसका अंत कहाँ और कितना भयानक होगा, कहा नहीं जा सकता" कहकर एकाएक मौन हो गये। पर दूसरे ही क्षण पुनः कहना प्रारम्भ किया "हाँ ! तो हमारा भारतीय संस्कृति का यह सर्वदा का सिद्धान्त रहा है कि उसने काया बदलने की अपेक्षा आत्मा का बदलना, मस्तिष्क का परिवर्तन करना ही उत्तम माना है। उसका राज्य हृदय का राज्य रहा है, प्रेम का राज्य रहा है न कि आतंक और हिंसा का। जब अङ्गुलिमाल ऐसे डाकू

का हृदय परिवर्तन हमारे सम्मुख है तब क्या यह सम्भव नहीं हो सकता कि ऐसे साहब का, जिसका मानसिक विकास इतनी हद तक हो चुका है चाहे भले ही वह एक पक्षीय भौतिकता से ओतप्रोत हो, क्या बदला नहीं जा सकता ? क्या उसे क्षमा ऐसे घातक और मर्माहत तीखे शस्त्र से परिवर्तित नहीं किया जा सकता ? मेरे मतानुसार तो किसी भी सुसभ्य पुरुष को क्षमा कर देना उसके मृत्यु दण्ड से भी भयानक और कठोर दण्ड है अतः इस साहब को मुक्त करना ही भारतीय संविधान और उसकी संस्कृति के सर्वथा अनुरूप होगा" सुनना न था कि कठघरे में खड़ा बन्दी साहब बेड़ियों सहित पैर पर लोट पड़ा। लोगों ने देखा कि वह लोटने के साथ ही एक ओर धीरे से लुढ़क गया। दौड़कर डाक्टरों ने आला लगाया, नाड़ी देखा और अत्यधिक प्रसन्नता ही हृदय गति के रुक जाने का कारण बता, अपने-अपने स्थान पर आकर बैठ गये। उस समय नीरजा चीख मार कर मृतक साहब के शव पर लोट पड़ी। कक्ष में एक भयानक नीरवता व्याप्त हो उठी तब तक उमा ने उस नीरवता को भंग करते हुये गुरुदेव को प्रणाम कर कहना प्रारम्भ किया, "बहन नीरजे! उठो, साहब उठो! यदि मैं मन वाणी और कर्म से सचमुच पतिव्रता हूँ और रही हूँ तो उस सारी तपस्या का फल आज तुम्हें अर्पित है उठो! उठो! और लोगों ने देखा कि उसके शरीर से एक तेज पुंज फूट कर साहब के शव में प्रवेश कर गया है और साहब एक अंगड़ाई लेकर धीरे धीरे उठने लगे हैं। लोगों की आखें उस भयानक प्रकाश की चकाचौंध को देर तक देखने में असमर्थ हो गईं और क्षण भर के लिये शव की आंखें झपक सी गईं। पर निर्मल अब भी कुर्सी पर पूर्ववत् ही बैठा सब कुछ देख रहा था। सहसा दौड़ कर उसने साहब और नीरजा का हाथ एक दूसरे से मिला दिया, 'उसी दिन शाम को लोगों ने पत्र-पत्रिकाओं में छपा हुआ यह समाचार बड़े चाव और आश्चर्य से पढ़ा।" "पुनर्जीवित साहब तथा नीरजा का पाणिग्रहण···।

॥ समाप्त ॥